

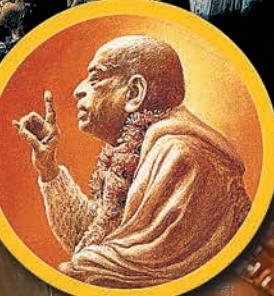
कृष्ण सूर्य सम, माया है अंधकार। जहाँ कृष्ण वहाँ नहीं माया का अधिकार ॥

₹ 30

भगवद् गीता

हो कृष्ण आन्दोलन की पत्रिका । अप्रैल 2022

पृष्ठ: 36



श्री श्री राधा
गोविंद धाम का
शुभ प्राकट्य

इस्कॉन जयपुर के संरक्षक, ओकेप्लस समूह के चेयरमैन एवं
कृष्ण भावनामृत सेन्टर [KBC] के संस्थापक एवं अध्यक्ष
श्री ओमप्रकाशा जी मोदी द्वारा मानसरोवर जयपुर स्थित
इस्कॉन मंदिर की समस्त भूमि (15000 वर्गगज) भेंट की गई है ।
[M] 98290 57901

रेंडर रजिस्ट्रेशन नं. : RAJ/P/2019/885
www.rera.rajasthan.gov.in



॥ आनंदम भवः ॥

Okay PLUS®
BUILDERS & DEVELOPERS
IN ASSOCIATION WITH
JIP
JAISALMER INFA PROJECTS

सीकर रोड पर
लठज़री अपार्टमेंट
मात्र ₹24* 2 बीएचके लाख
मात्र ₹30* 3 बीएचके लाख
बुकिंग मात्र 10% में

*T&C Apply.

8740 033 033

OKAY PLUS
Anandam
2&3 BHK PREMIUM HOMES

मेन 300 फीट सीकर रोड, जयपुर

2 एवं 3 बीएचके
प्रीमियम अपार्टमेंट्स



आधुनिक
वलब
हाउस

Corporate Office: OKAY PLUS HOUSING PVT. LTD.,
72 A, Kiran Path, Suraj Nagar (W), Civil Lines, Jaipur

HOME LOAN APPROVED BY SBI

Visit us at:

Member of

Disclaimer : Images shown above are representational, informative and are only indicative of the envisaged developments and the same are subject to change in actual. All intending purchaser/s are bound to inspect the plans and approvals and visit the project site and apprise themselves of all plans and approvals and other relevant information obtained from time to time from respective authority. The promoter holds no responsibility for its accuracy and shall not be liable to any intending purchaser or any one for the changes/alterations/ improvements so made.

Jaipur | Ajmer | Kishangarh | Beawar | Bhilwara | Dausa • Residential • Commercial • Township • Hotels • Farm House

T&C Apply. *Offer valid for Limited Period only.



40 से अधिक प्रोजेक्ट्स के साथ हजारों संतुष्ट ग्राहक



श्रील प्रभुपाद जी की प्रसन्नता हेतु सम्पूर्ण भारत में
अपने छेत्र में 'भगवद्दर्शन' एवं 'BACK TO GODHEAD' पत्रिका को
वितरण करने हेतु उत्साही एवं इच्छुक भक्त संपर्क करें।

Call / SMS / Whatsapp to:
Mayapur pati das
@ 0989944652 (New Delhi)
Mail: btg.mgz@gmail.com

विषय-सूची

ब्रह्मज्ञान ही पर्याप्त नहीं है

7

जब पीड़ित योगिनी
अँगारा बनकर लौटी

11

एक भाव्यशाली आत्मा

16

श्री श्री राधा गोविंद थाम
का शुभ प्राकृत्य

21

एक पता, फूल,
फल और जल

28

खण्डन - भगवद्गीता में
विभाग इस पत्रिका में
प्रकाशित विज्ञापनों का
अनुमोदन
नहीं करता। पाठकों से
निवेदन है कि वे स्वयं
सोच-विचारकर निश्चय
करें।

पाठकों के पत्र

4

प्रार्थना के क्षण

9

ज्ञानबिन्दु

19

श्रीभगवान् ने कहा

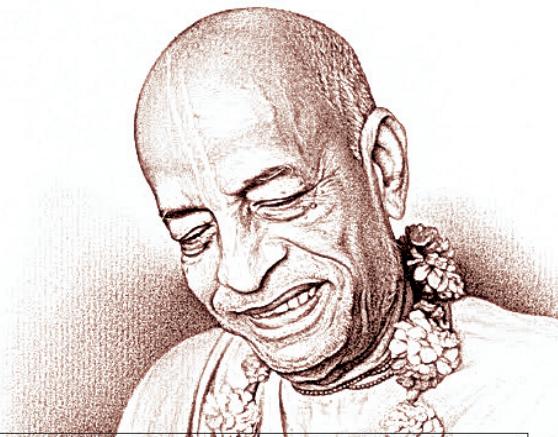
31

दिनदर्शिका

33

सम्पादकीय

34



11



'भगवद्गीता' अखिल मानवता को आध्यात्मीकृत करने का सांस्कृतिक साधन है। इसके द्येय इस प्रकार से हैं:

1. सत्य और ध्रम, जड़ और चेतन, नित्य और अनित्य का भेद लोगों को समझाना।
2. भौतिकतावाद के दोष लोगों को बताना।
3. वैदिक संस्कृति के अनुसार
- आध्यात्मिक जीवन का प्रशिक्षण देना।
4. वैदिक संस्कृति की रक्षा और प्रचार करना।
5. भगवान् श्रीचैतन्य महाप्रभु के उपदेश के अनुसार भगवान् के दिव्य नाम का संकीर्तन करना।
6. पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण का स्मरण करने और उनकी सेवा करने के लिए सारे जीवों की नम्र भाव से मद्दद करना।

पाठकों के पत्र

भगवद्वर्णन हरे कृष्ण आनंदोलन की अंग्रेजी पत्रिका (Back to Godhead) का अधिकृत हिन्दी संस्करण है, जिसकी शुरुआत श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद ने सन् 1944 में अपने गुरु श्री श्रीमद् भक्तिसिद्धांत सरस्वती महाराज की आज्ञानुसार की थी।

सदस्यता - मासिक भगवद्वर्णन सदस्यता शुल्क (कुरियर द्वारा) - एक वर्ष - 600 रु., दो वर्ष - 1200 रु., पाँच वर्ष - 2800 रु. (भारतीय डाक द्वारा) - एक वर्ष 300 रु., दो वर्ष - 600 रु., पाँच वर्ष - 1400 रु.

‘भगवद्वर्णन’ पत्रिका साल में बारह बार प्रकाशित की जाती है। मीटीआर्डर ‘भगवद्वर्णन’ के नाम से भेजा जाए। आरम्भ में भेजते समय या संपादक के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना पूरा नाम और पता पिल्कोड के साथ स्पष्ट अक्षरों में लिखें। यदि पते में परिवर्तन हो तो तुरंत सूचना दें। चेक से रकम भेजनी हो तो मुंबई के बाहर के चेक के लिये 10 रु. अधिक भेजें। चेक ‘भगवद्वर्णन’ के नाम से भेजें।

आप किसी भी महीने में सदस्य बन सकते हैं। अपनी धनराशि निम्नलिखित पते पर भेजें - ‘भगवद्वर्णन’, 302, अमृत इंडस्ट्रियल इस्टेट, 3री मंजिल, पश्चिम एक्सप्रेस हाइवे मीरा रोड (पूर्व), 401104 दूरभाषः - 9372631254, 9372635665(whatsapp) btg@indiabtg.com

बी.बी.टी. के समन्वयक एवं ट्रस्टी : श्रीमद् गोपालकृष्ण गोस्वामी महाराज, श्रीमद् जयद्वैत स्वामी महाराज • संपादक : श्यामानन्द द्वास • उपसंपादक : वंशी विहारी द्वास • व्यवस्थापक : सचिदानन्द द्वास, सुन्दररूप द्वास • वित्तीय प्रबंधन : सहदेव द्वास (एस.पी.माहे खारी), मंजरी देवी द्वासी • प्रसार व्यवस्थापक : पाण्डुरंग द्वास

®2021 भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट, मुद्रित एवं प्रकाशित: उज्ज्वल जाजू द्वारा भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट। प्रकाशन स्थान: 33, जानकी कुटीर, जुहू, मुंबई-49; मुद्रण: SAP Print Solutions Pvt Ltd, 128, लक्मी इंडस्ट्रीयल इस्टेट, हवुमान गली, एस.एन.पथ, लोअर परेल (प.) मुंबई 400013, भारत

संपादकीय कार्यालय : ‘भगवद्वर्णन’, 302, अमृत इंडस्ट्रियल इस्टेट, 3री मंजिल, पश्चिम एक्सप्रेस हाइवे मीरा रोड (पूर्व), 401104 दूरभाषः - 9372635665, 9372631254 btg@indiabtg.com

उलझनों के बीच श्रद्धा

जीवन में अनेक उलझनों के बीच हम भगवान के प्रति अपनी श्रद्धा को कैसे बनाए रख सकते हैं?

- संजीव बतरा, इंटरनेट द्वारा हमारा उत्तर - एक मानव होने के नाते हम सब सीमित हैं। यह समझना भूल होगी कि भक्ति का अभ्यास हमें हमारी मानवीय सीमाओं से परे ले जा सकता है। जीवन में विपत्तियों के बीच व्याकुल हो जाना स्वाभाविक है। जब श्रील प्रभुपाद दिल्ली की सड़कों पर पत्रिकाएँ बाँट रहे थे, तब एक गाय ने उन्हें टक्कर मार दी। श्रील प्रभुपाद उस प्रहार से सड़क पर गिर पड़े। उनकी सारी पत्रिकाएँ तिर-बितर हो गयीं। उन्होंने उठने का प्रयास किया किन्तु उठ नहीं पाए। वहाँ दिल्ली की सड़क पर पड़े-पड़े उनके मन में विचार आया - मेरे साथ ऐसा क्यों हो रहा है?

श्रील प्रभुपाद ने अपने एक तात्पर्य में लिखा है - एक भक्त विचलित हो सकता है किन्तु निराश नहीं। विचलित अर्थात् यह न समझ पाना कि क्या करें क्या न करें। निराश अर्थात् कुछ भी करने का उत्साह न होना। हम सभी का जीवन अनिश्चितताओं से भरा है। भले ही हमारी मंशा श्रीकृष्ण की सेवा करने की हो, किन्तु कभी-कभी यह स्पष्ट नहीं हो पाता है कि श्रीकृष्ण की सेवा कैसे करें।

विचलित होने और निराश होने के बीच के अंतर को समझना महत्वपूर्ण है। हर किसी के जीवन में उलझनें आती हैं क्योंकि जीवन सामान्यतः जटिल है। एक मानव होने के नाते हम सीमित हैं अर्थात् हम पथभ्रष्ट हो जाते हैं। हम श्रीकृष्ण की भाँति अनंत और अच्युत नहीं हैं। हम सीमित हैं, अतः निश्चित रूप से हम जीवन में कभी न कभी विचलित होंगे। हम निराश तब होते हैं जब जीवन की जटिलताओं के कारण आशा खो बैठते हैं और अंतः पलायन कर जाते हैं। आध्यात्मिकता हमें श्रीकृष्ण की भाँति अच्युत नहीं बनाती। आध्यात्मिकता हमारी निकृष्ट

प्रकृति - काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्स्यर - से ऊपर उठने में हमारी सहायता करती है ताकि भीतर से शुद्ध होने पर हम अपनी उलझनों को निराशा में परिवर्तित न होने दें।

जब जीवन में हमारे सामने कोई उलझन अथवा संकट आए, जब हम किसी मार्ग पर चलें और अचानक अंधेरा छा जाए, तो ऐसे समय में यह मंत्र याद रखें - छोटे-छोटे सरल कदम। हम स्वयं से पूछें - मैं अभी क्या कर सकता हूँ? मैं अभी, इस समय, श्रीकृष्ण की कोई छोटी-मोटी सेवा कैसे कर सकता हूँ। जीवन में बड़े लक्ष्यों के निर्धारण के लिए स्थिरता की आवश्यकता होती है। जब हम उलझनों से घिरे होते हैं तब हम बड़े-बड़े लक्ष्यों के बारे में ठीक से नहीं सोच पाते हैं। ऐसे समय में जब सब कुछ हमारे विपरीत जा रहा हो, हमें तात्कालिक परिस्थिति पर ध्यान देने की सबसे अधिक आवश्यकता है।

जब परिस्थितियाँ अत्यधिक कठिन हो जायें, तो हमें बस उतना ही आगे का सोचना चाहिए जिसे हम ठीक से नियंत्रित कर सकें। मैं अगले एक घंटे, एक दिन, एक सप्ताह के लिए सर्वश्रेष्ठ कैसे बन सकता हूँ? सर्वश्रेष्ठ अर्थात् मैं चिङ्गिचिङ्गा नहीं हूँ, किसी पर चिल्हा नहीं रहा हूँ, स्वयं को कोस नहीं रहा हूँ आदि। यदि हम अपने व्यवहार को एक घंटे, एक दिन, एक सप्ताह के लिए नियंत्रित कर सकते हैं, तो स्वयं की सराहना करें, आत्मबल देने के लिए श्रीकृष्ण का धन्यवाद करें और फिर एक बार अगले एक घंटे, एक दिन, एक सप्ताह के लिए स्वयं पर नियंत्रण करने का प्रयास करें। जब जीवन में निराशा घेर ले तो हमें स्वयं का उत्साहवर्धन करना चाहिए। हमें अपने भीतर सकारात्मकता और एक उद्देश्य की भावना पैदा करने के लिए जो भी करना पड़े उसका प्रयास करना चाहिए। भले ही छोटे-छोटे सरल कदम उठाने से हमारे जीवन में अनिश्चितता का अंधकार तुरन्त नष्ट न हो, किन्तु हमारी सेवा करने की यह भावना कि मैं अभी श्रीकृष्ण की

सेवा कैसे कर सकता हूँ, मैं अभी कौन से छोटे-छोटे कदम उठा सकता हूँ, यह भावना हमारे लिए एक छोटे-से दीपक की भाँति बन जाएगी। यह दीपक हमें एक कदम आगे का मार्ग दिखाएगा। अंततः हम पायेंगे कि इस प्रकार छोटे-छोटे कदमों के कारण हम चलते भी रहेंगे और कठिन समय में भी प्रगति करते रहेंगे।

जीवन की जटिलताएँ हमें विचलित करेंगी, किन्तु हमें निराश होने की आवश्यकता नहीं है। यदि हम अपनी सेवा करने की भावना पर ध्यान बनायें रखें तो हम निराशा से बच सकते हैं। हम बस छोटे-छोटे सरल कदम उठायें, और इससे धीरे-धीरे परिवर्तन होने लगेगा। यदि हम दृढ़तापूर्वक श्रीकृष्ण की सेवा करते रहें, तो श्रीकृष्ण हमारी कठिनाइयों को दूर करने में सहायता करेंगे। हमारे कर्म हमें जिस भी कठिनाई में डालेंगे, अपने प्रयास और श्रीकृष्ण की कृपा से ही हम उससे बाहर निकल सकेंगे।

आध्यात्मिक प्रगति के लक्षण

हम कैसे समझ सकते हैं कि हम आध्यात्मिक रूप से प्रगति कर रहे हैं?

- रामवीर, इंटरनेट द्वारा

हमारा उत्तर - आध्यात्मिक जीवन में प्रगति का पहला सूचक है जीवन से चिंता, तनाव और उत्तेजना का कम होना। भगवद्गीता 2.16 में कहा गया है - नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः। अस्थिरता भौतिक जीवन का लक्षण है और स्थिरता आध्यात्मिक जीवन का। जब हम भौतिक चेतना में स्थित होते हैं, तब हम इस संसार की अस्थिरता से भी प्रभावित होते हैं। हमारी चेतना जितनी आध्यात्मिक होती जाएगी, उतना ही वह भौतिक अस्थिरता से विचलित नहीं होगी।

यह संसार एक सागर की भाँति है जहाँ सदा लहरें उमड़ती रहती हैं। मनुष्य को इन लहरों के उतार-चढ़ाव से निरंतर संघर्ष करते रहना पड़ता है। ऐसे में मनुष्य यदि किसी

लंगरयुक्त नौका में बैठ जाए, तब डगमगाना बहुत कम हो जाता है। इसी प्रकार, इस भौतिक जगत में सदा व्याकुल करने वाले परिवर्तन होते रहते हैं किन्तु जब हमारी चेतना आध्यात्मिक हो जाती है और चिरस्थायी परतत्व भगवान से जुड़ जाती है, तब वह एक लंगरयुक्त नौका में बैठे रहने जैसा होता है। जब हम भक्तियोग द्वारा भगवान से जुड़ते हैं तो यह ऐसा है मानो हमने स्वयं किसी बड़ी वास्तविकता को कसकर पकड़ लिया हो। ऐसा करने के बाद जीवन में डगमगाना बहुत कम हो जाता है।

हम जितना अधिक आध्यात्मिक होंगे, उतना ही शांत रहेंगे। हम परिस्थितियों से चिंतित हो सकते हैं किन्तु व्यथित नहीं। इसका अर्थ लापरवाही अथवा गैरजिम्मेदारी नहीं। हमें संसार में अपने दायित्व का निर्वाह भी करना है और अस्थिरता का सामना भी। आध्यात्मिक रूप से उन्नत होने पर जब हमें जीवन में अस्थिरता का सामना करना पड़ेगा तब हम उसे धैर्य के साथ कर पाएंगे और अस्थिरता के कारण विचलित नहीं होंगे।

साथ ही, यह ध्यान रखना भी महत्वपूर्ण है कि चिंता-तनाव और भौतिक वस्तुओं की लालसा एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। जितना हम आध्यात्मिक होते जायेंगे, भौतिक वस्तुओं के लिए हमारी लालसा उतनी कम होती जायेगी। भौतिक चेतना में हम अपना मूल्यांकन इस आधार पर करते हैं कि हमारे पास कितनी धन-संपत्ति है। जब भोग-विलास की हमारी लालसा कम होने लगे तब समझ जायें कि हम आध्यात्मिक प्रगति कर रहे हैं। यह आध्यात्मिक प्रगति का दूसरा सूचक है।

चिंता-तनाव तथा भोग-विलास की लालसा कम होने से हमारे अन्दर की नकारात्मकता घटती है। आध्यात्मिक प्रगति के कारण एक सकारात्मक बदलाव भी होता है। जैसे-जैसे हम

और अधिक आध्यात्मिक प्रगति करेंगे हम शांति और आंतरिक आनंद का अनुभव भी करने लगेंगे। यह हमारी आध्यात्मिक प्रगति का तीसरा सूचक है।

इस प्रकार हम जैसे-जैसे आध्यात्मिक प्रगति करते जायेंगे, वैसे-वैसे आध्यात्मिक चेतना हमारे मन में अपना स्थान बनाती जायेगी। हम घर पर ही सारा समय नहीं बिताते, कभी-कभी हम काम के लिए घर से बाहर भी जाते हैं किन्तु फिर कुछ समय पश्चात घर वापस आ जाते हैं। इसी प्रकार, जब हमारी चेतना आध्यात्मिक हो जाती है, तो इसका अर्थ यह नहीं कि हम अपने भौतिक उत्तरदायित्वों को भूल जाते हैं। जैसे हम अपना काम पूरा करके घर वापस आ जाते हैं, वैसे ही हम अपनी भौतिक उत्तरदायित्वों को पूरा करके पुनः आध्यात्मिक चेतना में लौट आते हैं।

इस प्रकार जीवन में चिंता-तनाव, भोग-विलास की लालसा में कमी होना तथा आनन्द एवं प्रसन्नता में वृद्धि होना जैसे लक्षणों से हम समझ सकते हैं कि हम आध्यात्मिक प्रगति कर रहे हैं।

श्रील प्रभुपाद के 125 आविभवि के उपलक्ष्य में हम भगवद्वर्ण पत्रिका के डिजिटल संस्करण का लोकार्पण कर रहे हैं।

भगवद्वर्ण का डिजिटल संस्करण

हरे कृष्ण आनंदोलन की पत्रिका

अबतः भगवद्वर्ण का डिजिटल रूप आप रासी की तरफ से आ जाया है। इसमें आप भगवद्वर्ण के लिए अंकों के लेख पढ़ सकेंगे, विभिन्न लेखों को पढ़ा सकेंगे और अपने निकालों के साथ राजा कर सकेंगे - और यह साथ आप ऑनलाइन अपने खानाएँ खाएं तो वह आप कर सकेंगे। और यदि आप उस विषयों पर जानकारी करना चाहते हों तो वह भी सरलतापूर्क कर सकते हैं।

इसका साथ पत्रिका का मुहित संस्करण का प्रकाश भी होता रहेगा। आप डिजिटल अवया मुहित संस्करण में से किसी का भी चुनाव कर सकते हैं।

1 वर्ष की
सदस्यता (12 अंक)
₹ 200
केवल

(डिजिटल संस्करण की
यह सुविधा अंद्रेजी पत्रिका
‘बैंक टू गॉर्डेन’ के लिए भी उपलब्ध है।)

सदस्य बनने के लिए btgindia.com पर लॉगइन करें



ब्रह्मज्ञान ही पर्याप्त नहीं है

भगवद्रीता के इस श्लोक पर व्याख्यान करने के पहले एक शुभ समाचार आप लोगों को सुना रहा हूँ। यह जो मंदिर है, जिसे आप सभी बड़ा सुन्दर मन्दिर कहते हैं, इसके कारण हैं श्रीमान् काशीरामजी शर्फाफ एवं उनकी पत्नी श्रीमती गीतादेवी। मैं जब 1971 में वृन्दावन आया था, उस समय इन सज्जन ने अपनी खुशी से यह भूखण्ड हमें भेट करने का प्रस्ताव रखा था। फिर भगवान् की इच्छा से भेट भी हो गई। उस समय हमारे पास धन भी कुछ नहीं था, फिर भी किसी तरह से सारे विश्व में भीख माँग-माँगकर इस मंदिर के निर्माणकार्य में कम-से-कम ५० लाख रुपया खर्च हुआ है। उस समय काशीरामजी ने अपने प्रयोग के लिए सामने की थोड़ी-सी भूमि अपने लिए रखी थी, किन्तु आज मंदिर देखकर उन्हें अत्यन्त आनन्द हुआ और उन्होंने कह दिया कि वह भूमि भी आपकी है। इस पर आपको जो करना वह कीजिए। अब इस जगह पर हम लोग एक गुरुकुल बना रहे हैं। इस गुरुकुल को बनाने के लिए जो खर्च होगा, ये हमारे पास विश्वम्भर नाथजी अग्रवाल बैठे हैं, उसके लिए वे कम-से-कम एक लाख रुपया तो देंगे ही। हुआ तो और अधिक भी दे सकते हैं। गुरुकुल निर्माणकार्य में कल से आरम्भ कर दूँगा। आप लोग इस कृष्णभावानामृत आन्दोलन के बारे में कुछ-कुछ जानते ही हैं कि हम लोग सारी दुनिया में भगवान् कृष्ण के नाम का प्रचार कर रहे हैं। इसका और एक नाम है ‘हरे कृष्ण आन्दोलन’। बड़े-बड़े विद्वान् अब इस आन्दोलन के विषय में पुस्तकें लिख रहे हैं, लेख लिख रहे हैं। एक विश्वविद्यालय के प्रोफेसर हैं बुलर वार्टना, वे

हरे कृष्ण और विरुद्ध संस्कृति पर एक बड़ी किताब लिख चुके हैं। बहुत सुन्दर पुस्तक है। इस प्रकार इस आन्दोलन को धीर-धीरे पूरे संसार में सभी पसन्द कर रहे हैं। यह श्रीचैतन्य महाप्रभु की वाणी है-

पृथिवीते आछे यत नगरादि ग्राम ।

सर्वत्र प्रचार हइबे मोर नाम ॥

(चैतन्य भागवत, अन्त्य 4.126)

उनकी भविष्यवाणी थी कि पूरे विश्व में जितने गाँव और जितने शहर हैं, प्रत्येक स्थान में उनके नाम का प्रचार होगा। और अब यह हो रहा है। सब लोग भारतीय संस्कृति ग्रहण कर रहे हैं और बड़े आग्रह से ग्रहण कर रहे हैं। इस विषय में आप लोगों से बाद में चर्चा करेंगे। अब भगवान् की कथा करते हैं।

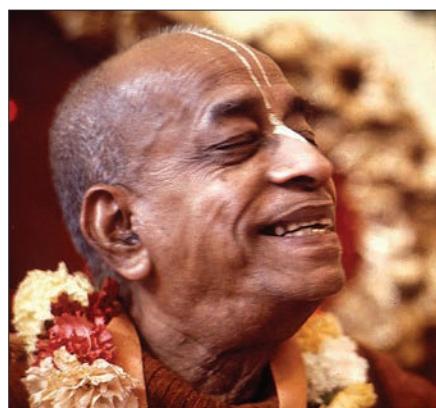
भगवान् की नित्य लीलाएँ

आज भगवान् श्रीकृष्ण की जन्मतिथि है, अतः उनकी कुछ चर्चा करनी चाहिए। गीता में कहा गया है, अजोऽपि सन्नव्ययात्मा। भगवान् अजन्मे हैं, उनका जन्म नहीं होता है। हम सभी भगवान् के अंश हैं और हम लोगों का भी जन्म नहीं होता है। यह भगवद्रीता

में बताया गया है। न जायते प्रियते वा। भगवान् के अंश होने के कारण यदि हमारा जन्म नहीं होता है, हमारी मृत्यु नहीं होती है, तो फिर भगवान् का जन्म किस प्रकार हो सकता है? इसलिए भगवान् स्वयं बताते हैं - अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्। अजन्मे होते हुए भी भगवान् जन्म लेते हैं। यह उनकी अचिन्त्य शक्ति है। तो आज उनका जन्मदिन है। आज ही नहीं, वस्तुतः प्रत्येक दिन ही भगवान् का जन्मदिन है। श्रीचैतन्य महाप्रभु बताते हैं कि इस संसार में भगवान् का जन्म सूर्योदय के समान है। सबरे सूर्य को देखकर हम समझते हैं कि सूर्य का जन्म हुआ, सूर्य का उदय हुआ। सूर्य तो हर समय आकाश में स्थित है, किन्तु जब वह हमें दिखायी देता है, हम समझते हैं कि अब सूर्य का उदय हुआ। इसी प्रकार अनन्त कोटि ब्रह्मांड में भगवान् अपनी लीलाओं के माध्यम से कहीं-न-कहीं जन्म ले रहे हैं। इसलिए भगवान् की लीलाओं को नित्य कहा जाता है। केवल जन्म ही नहीं, भगवान् की जितनी लीलाएँ हैं, जो उन्होंने वृन्दावन, मथुरा तथा द्वारका में की, वे सब उनकी नित्य लीलाएँ हैं। ऐसा नहीं है कि भगवान् ने 5000 वर्ष पहले जन्म लिया था और अभी भगवान् नहीं हैं। नहीं! ऐसा नहीं है। भगवान् अभी भी विद्यमान हैं। जैसे आप रात में सूर्य को नहीं देखते हैं, तो इसका अर्थ यह नहीं है कि सूर्य आकाश से चला गया, वह आकाश में है ही नहीं। सूर्य हर समय है, बस दिखता नहीं है।

तत्त्वतः समझने का अर्थ

इसलिए भगवान् कहते हैं, जन्म कर्म च



मे दिव्यमेवं यो वेति तत्त्वतः । भगवान् की जन्मतिथि साधारण नहीं है। वह दिव्य है, अलौकिक है। यो वेति तत्त्वतः, त्यक्त्वा देहं पुर्नजन्म नैति मामेति सोऽर्जुन । भगवान् के जन्म के विषय में यदि किसी को तात्त्विक मालूम हो जाए, तो समझ लीजिए उसका उद्धार हो गया। केवल भगवान् के जन्म को समझने से ऐसा हो जाता है। यहाँ इस श्लोक में भी यही कहा गया है,

मनुष्याणां सहस्रेषु कथिततिं सिद्ध्ये ।
यततामपि सिद्धानां कथित्वां वेति तत्त्वतः ॥
(भगवद्गीता 7.3)

भगवान् को तत्त्वतः समझना चाहिए। और ये तत्त्व वस्तु किस तरह से समझी जाती है?

तात्त्विक ज्ञान नहीं है।

तात्त्विक ज्ञान है कि भगवान् का शरीर और भगवान् की आत्मा में कोई अन्तर नहीं है। दोनों एक ही वस्तु हैं। इसलिए भगवान् कहते हैं—अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम् । परं भावभजानन्ते...

भगवान् का शरीर और भगवान् की आत्मा अलग नहीं है। हमारा शरीर और हमारी आत्मा अलग है। हमारे शरीर को ‘क्षेत्र’ कहा जाता है और आत्मा को ‘क्षेत्रज्ञ’ कहा जाता है। भगवान् यह भी बताते हैं, क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत । वास्तव में जीवात्मा और परमात्मा दोनों इस शरीर के स्वामी हैं। वास्तव में भगवान् ही असली

हम जन्म-जन्मांतर तक शरीर प्राप्त करते रहते हैं। किन्तु यदि इस मनुष्य शरीर में हम भगवान् को तत्त्वतः समझ गये, तो फिर हमें यह शरीर धारण करना नहीं पड़ेगा। यही विज्ञान है। ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानम् । आप यह सब लोग जानते हैं।

भगवान् के अवतरण के उद्देश्य

भगवान् दो कार्य करने के लिए अवतरित होते हैं। परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् । पहला साधुओं का उद्धार करना और दूसरा दृष्टियों का नाश करना। भगवान् अच्युत हैं, उनके लिए किसी का नाश करना या किसी की रक्षा करना, ये दोनों एक ही बात है। भगवान् जिसका नाश करते हैं, वह भी मुक्त हो जाता है। इसलिए भगवान् जो कुछ करते हैं, हमारे मंगल के लिए ही करते हैं।

भगवान् के भक्त समझते हैं कि यदि कभी हमें किसी कारणवश दुःख मिलते हैं, तो उसमें भी हमें भगवान् की कृपा ही समझनी चाहिए। तत्त्वज्ञकम्पां सुसमीक्षमाणो भुज्जान एवात्मकृतं विपाकम् । भगवद्दक्त कभी भगवान् को दोष नहीं देते। यदि कभी उन्हें असुविधा होती है, वे उसमें भी भगवान् का आभार ही मानते हैं कि “हे भगवन्! हमारे ऊपर आपकी अपार कृपा है।” यह भगवद्दक्त की दृष्टि है।

तो भगवान् आज जन्म ले रहे हैं। केवल आज ही नहीं, जिस प्रकार सूर्य प्रत्येक दिन उदय होता है, उसी प्रकार भगवान् इस ब्रह्माण्ड में नहीं तो दूसरे ब्रह्माण्ड में प्रतिदिन अवतरित हो रहे हैं। अनंत कोटि ब्रह्माण्ड हैं और प्रत्येक ब्रह्माण्ड में वृन्दावन है। इन अनन्त कोटि वृन्दावनों में भगवान् का जन्म, कर्म सब नित्य हो रहा है। इसलिए भगवान् की लीलाओं को ‘नित्यलीला’ कहा जाता है। नरोत्तमदास गोस्वामी लिखते हैं कि जो व्यक्ति भगवान् की इन नित्य-लीलाओं को तत्त्व से समझ जाता है, उसे यह शरीर छोड़कर पुर्नजन्म नहीं लेना पड़ता। हमारी वैदिक सभ्यता पुर्नजन्म

वास्तव में भगवान् ही इस शरीर रूपी मकान के स्वामी हैं, जीवात्मा किरायेदार है।

उसे भी भगवान् ने बताया है, भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः । तीन स्थानों पर तत्त्वतः शब्द का प्रयोग हुआ है। एक स्थान पर भगवान् बताते हैं, जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेति तत्त्वतः । और यहाँ भी बताया कि यततामपि सिद्धानां, सिद्धि लाभ किये लोगों में से कोई विरला ही श्रीकृष्ण को तत्त्व से जान पाता है।

वास्तव में सिद्धि का अर्थ होता है आत्मतत्त्व का ज्ञान। हजारों-करोड़ों मनुष्यों में कोई एक सिद्धि प्राप्ति के लिए प्रयास करता है। हर कोई ऐसा नहीं करता। इसलिए भगवान् कहते हैं— मनुष्याणां सहस्रेषु कथिततिं सिद्ध्ये । जिहोंमे सिद्धि लाभ की है, उनमें से कोई विरला ही भगवान् को तत्त्वतः समझता है। और यदि कोई समझे कि हमारी तरह ही भगवान् कृष्ण का जन्म साधारण जन्म होता है, तो ये तात्त्विक नहीं हैं। मायावादी लोग समझते हैं कि भगवान् निराकार हैं और वे जब इस संसार में आते हैं तब मायावी शरीर धारण करके आते हैं। यह

स्वामी हैं। जैसे किसी मकान में एक किरायेदार है और एक मालिक है। तो वास्तव में भगवान् ही इस शरीर रूपी मकान के स्वामी हैं, जीवात्मा किरायेदार है। यद्यपि हमें यह शरीर अपनी इच्छा से मिला है, किन्तु फिर भी यह शरीर भगवान् का है। भगवान् का एक नाम है ऋषिकेश, अर्थात् इन्द्रियों के स्वामी। भगवद्गीता में भगवान् कहते हैं कि यह शरीर एक यंत्र है, मशीन है। मैं यह शरीर नहीं हूँ। देहोस्मिन् यथा देहे । हमें इस शरीर रूपी यंत्र में बैठा दिया गया है। किसने बैठाया? मायया, मायादेवी ने। मायादेवी भगवान् की शक्ति है। भगवान् उन्हें आदेश देते हैं, “देखो, यह जीव यह चाहता है, इसे ऐसा शरीर दो।” इसलिए भगवान् कहते हैं, यन्त्रारुढानि मायया। हमें यह यंत्र रूपी शरीर मिलता है, जिसकी सहायता से हम काम करते हैं, यहाँ-वहाँ घूमते हैं और फिर जैसी हमारी इच्छा जागृत होती है, उस कर्म के अनुसार हमें भावी शरीर प्राप्त होते हैं। कर्मणादैवनेत्रेण जन्तुर्देहेष्पत्तये । इस प्रकार

पर विजय प्राप्त करने के लिए है, और कुछ नहीं। यहाँ भोगने के लिए नहीं है। ज्ञान, योग और भक्ति के मार्ग पर चलने का क्या कारण है? पुनर्जन्म पर विजय प्राप्त करना, अन्य कुछ नहीं।

भौतिक जगत् में हमें चार प्रकार के कष्ट हैं। जन्ममृत्युजराव्याधि दुःखदोषानुदर्शनम्। बड़े-बड़े वैज्ञानिक, दार्शनिक, कल्याणकर्ता आदि संसार की समस्याओं का समाधान करना चाहते हैं। किन्तु भगवान् कहते हैं ये सब समस्याएँ तात्कालिक हैं। वास्तविक समस्या है जन्म, मृत्यु, जरा, व्याधि। तो हम जन्म-मृत्यु की समस्या का समाधान करना चाहते हैं जिससे हमारा पुनर्जन्म न हो। ज्ञानीजन कहते हैं हम ब्रह्म में लीन हो जायेंगे, ब्रह्म में एक हो जायेंगे। भगवान् के लिए किसी को स्वयं में लीन करना कठिन नहीं है। भगवान् उन्हें अपने भीतर ले सकते हैं। परन्तु वैष्णवजन भगवान् में लीन होना नहीं चाहते। वे भगवान् की सेवा में नित्यकाल नियुक्त रहना चाहते हैं। लीन होने में एक समस्या है कि वहाँ केवल सत् एवं चिद् है, आनन्द नहीं है। हम नित्यकाल तक ब्रह्मज्योति में रह सकते हैं, किन्तु केवल नित्य हो जाने से आनन्द नहीं

मिलता है। शास्त्र में कहते हैं—येऽन्येरविन्दाक्ष विमुक्तमानिन स्त्वय्यस्तभावादिविशुद्ध बुद्ध्यः। इस प्रकार ब्रह्मज्योति में लीन होकर जो लोग स्वयं को विमुक्त समझते हैं, उनकी बुद्धि अभी शुद्ध नहीं हुई है। स्त्वय्यस्तभावाद्, क्योंकि जब तक वे भगवान् के पास नहीं पहुँचेंगे, उनकी मुक्ति स्थाई नहीं रह सकेगी। क्यों? आख्य कृच्छ्रेण परं पदं ततः पतन्त्यधो। आप लोग जानते हैं कि अनेक बड़े-बड़े संन्यासी ब्रह्मसत्यं जगन्मिथ्या कहकर इस संसार का त्याग कर देते हैं, किन्तु कुछ समय बाद ही वे पुनः संसार में लौटकर राजनीति, सांसारिक कल्याणकार्य अथवा अन्य कार्यों में फँस जाते हैं। ऐसा इसलिए क्योंकि केवल मुक्त होना पर्याप्त नहीं है।

ब्रह्मभूत प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति।
समः सर्वेषु भूतेषु मद्दकिं लभते पराम् ॥

(भगवद्गीता 18.54)

केवल ब्रह्मभूत स्तर पर पहुँचने से काम नहीं चलेगा। हमें और आगे बढ़ना होगा। वह आगे बढ़ने का काम है भक्ति। मद्दकिं लभते पराम्। ज्ञानी और योगी बनने के पश्चात् यदि कोई साधुसंग से भक्त बन जाए, तभी उनकी मुक्ति सही होती है। ऐसे लोग

भगवान् के पास चले जाते हैं। भगवान् यह सब सिखाने के लिए अवतरित होते हैं। यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। धर्मस्य ग्लानि का अर्थ होता है—जब हम भगवान् को भूल जाते हैं तो वह धर्मस्य ग्लानि है। धर्म भगवान् बनाते हैं। धर्म तु साक्षाद्गवत्प्रणीतम्। हम लोग धर्म नहीं बना सकते। आजकल एक फैशन बन गया है कि हमने एक धर्म बना लिया, आपने एक धर्म बना लिया। किन्तु ये सब धर्म नहीं है, ये सब कै तब (ठगी) है। धर्मः प्रोज्जितकैतवोऽत्र, यह सब ठगी किस्म के धर्म हैं। भागवत से ऐसे धर्मों को फेंक दिया गया है। वास्तविक धर्म क्या है? जो भगवान् बताते हैं वही वास्तविक धर्म है। भगवान् कहते हैं—सर्व धर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज, तो यह भी धर्म है। इसलिए भगवान् हर युग में समझाने के लिए आते हैं।

आज भगवान् का आविर्भाव दिवस है और भगवान् जो कहते हैं, आप उसे ग्रहण करके अपने जीवन को सफल कीजिए और हमें आशीर्वाद दीजिए कि हम पूरे संसार में भगवान् की कथा का प्रचार कर सकें।

आपका बहुत-बहुत धन्यवाद! 🌱

प्रार्थना के श्लोक

ध्यायेदाजानुबाहुं धृतशरधनुषं बद्धपद्मासनस्थं ।
पीतं वासोवसानं नवकमलदलस्पर्धिनेत्रं प्रसन्नम् ॥
वामाङ्कारूढसीता मुखकमलमिललोचनं नीरदाभम् ।
नानालङ्कारदीप्तं दधतमुरुजटामण्डनं रामचंद्रम् ॥

जो धनुष-बाण धारण किये हुए हैं, बद्धपद्मासन की मुद्रा में विराजमान हैं और पीतांबर पहने हुए हैं, जिनके आलोकित नेत्र नवकमल दल के समान स्पर्धा करते हैं, जो प्रसन्नचित हैं, जिनके नेत्र बायें अंक (गोद) में बैठी सीतादेवी से मिले हुए हैं, तथा जिनका रंग बादलों की तरह श्याम है, उन आजानुबाहु, विभिन्न अलंकारों से विभूषित जटाधारी श्रीराम का ध्यान करें।

- श्रीरामरक्षास्त्रोत्र





जूब पीड़ित योगिनी ॐ गारा बनकर लौटी

रामायण की एक विरच्यात् कथा रहस्यमयी वर्णन द्वारा अनेक बारिकियों तथा कर्म के सिद्धान्त को प्रस्तुत करती है।

- चैतन्य चरण दास

जैसी करनी वैसी भरनी। यद्यपि सब इस कहावत को जानते हैं, किन्तु वास्तविक जीवन में इसके उदाहरण विरले ही देखने को मिलते हैं। एक कारण यह हो सकता है कि ‘भरनी’ अक्सर उसी रूप में लौटकर नहीं आती जिस रूप में हमने ‘करनी’ की थी।

कर्म के नियम को स्थापित करती इस कहावत का सरल अर्थ है कि हमें अपने कर्मों के परिणाम अवश्य भोगने पड़ेंगे। कब, कहाँ, किस रूप में, ये सब काल-स्थान-परिस्थिति पर निर्भर करता है। भगवद्गीता (4.16) बताती है कि कर्मों की गति अत्यन्त जटिल है। इसे समझना अत्यन्त कठिन है।

तथापि कई बार शास्त्र ऐसे दृष्टान्त देते हैं जिससे अनभिज्ञों की आँखें खुल जायें। रामायण में ऐसा ही एक दृष्टान्त है जो दर्शाता है कि रावण को उसकी ऐयाशी कितनी महँगी पड़ी।

योगिनी द्वारा आत्मविनाश

रावण अपने उड़ने वाले रथ के शिखर पर खड़ा था। वह विश्वविजय यात्रा पर निकला था और चारों दिशाओं में अपने सामर्थ्य का डंका बजा रहा था। हिमालय पर्वतमाला के ऊपर से उड़ते हुए सहस्रा उसकी दृष्टि को भोग की एक वस्तु दिखायी दी। वस्तुतः उसकी वासना के सामने चारों ओर व्याप्त प्राकृतिक सुन्दरता नगण्य थी। उसे स्त्री जैसा कुछ दिखायी दिया। वह योगमुद्रा में बैठी ध्यान में लीन

दीख रही थी। अपने रथ को धीमा तथा नीचे करके रावण ने ध्यान से देखा। वह एक स्त्री ही थी और कोई साधारण नहीं अपितु परम सुन्दरी स्त्री। रावण की कामवासना भभक उठी और वह तेजी से नीचे आया। वन्य पहाड़ियों में किसी स्त्री का इस प्रकार अकेले रहना असामान्य था। रावण ने चारों ओर देखा कहीं उस स्त्री का कोई संरक्षक आसपास तो नहीं है। यदि कोई है तो वह शीघ्र ही उससे निपट लेगा, और यदि नहीं है तो रावण का काम सरल था।

निकट पहुँचकर उसने अपनी योगसिद्धि से मनुष्य रूप धारण किया। योगिनी को उसकी उपस्थिति का आभास हो गया और उसने आँखें खोल ली। उसके असाधारण सौन्दर्य को देखकर रावण ने अपना परिचय दिया।

“हे सुन्दरी, तुम कौन हो? यहाँ निर्जन बन में अकेली क्या कर रही हो? ऐसा कौन पुरुष होगा जिसे तुम पत्नी रूप में प्राप्त होओगी?”

अतिथि को देख वह स्त्री लज्जित होकर नीचे देखने लगी और बोली, “मैं महर्षि कुशध्वज की पुत्री हूँ और भगवान् विष्णु को पति रूप में वरण करना चाहती हूँ। उन्हें प्राप्त करने के लिए मैं इस पवित्र पर्वत पर तप कर रही हूँ।”

उसका मधुर स्वर सुनकर रावण की कामज्वाला और भड़क उठी। वह बोला, “मैं राक्षसराज रावण हूँ। तुम्हरे सौन्दर्य ने

मेरा हृदय जीत लिया है। मैं तुम्हें अपनी पटरानी बनाना चाहता हूँ। मेरे साथ मेरी स्वर्ण नगरी लंका चलो।”

रावण का प्रस्ताव सुनकर वेदवती ने कुछ क्रोध में कहा, “मैं श्रीविष्णु को समर्पण कर चुकी हूँ। मेरे चित्त में अन्य किसी पुरुष की अभिलाषा नहीं है। राक्षसराज, कृपया जिस मार्ग से आये हो उसी से लौट जाओ। मैं आपको सन्तुष्ट नहीं कर सकूँगी।”

अस्वीकृति सुनकर रावण हँसने लगा। निःसन्देह वेदवती रावण की शक्ति से अनजान थी; रावण को उसकी स्वीकृति की कोई आवश्यकता नहीं थी। एक बार वह उसके महल में पहुँच जायेगी, वह उसे इतना राजसी ऐश्वर्य देगा कि वह शीघ्र ही विष्णु को प्राप्त करने का अपना मूर्ख स्वप्न त्याग देगी। देवताओं में सर्वेषां भगवान् विष्णु रावण के कट्टर शत्रु थे। यद्यपि रावण ने भ्रमण करते हुए सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को जीत लिया था, विष्णु उनसे बच निकले थे। वेदवती विष्णु के लिए थी, इसलिए रावण के लिए वेदवती को प्राप्त करना एक प्रकार से विष्णु को पराजित करने के समान था।

वह वेदवती को दबोचने के लिए आगे बढ़ा। उसकी दुष्ट भावना को देखकर आश्चर्यचकित वेदवती पीछे हट गयी। वह आगे झपटा और उसके लम्बे बाल पकड़ लिये। किन्तु बालों द्वारा पकड़कर वेदवती को अपनी ओर खींचने का विचार उसका

सपना बनकर रह गया। रावण के हाथों में केवल लम्बे बालों का गुच्छा था। वेदवती ने योगसिद्धि के बलपर अपने हाथ से तलवार का काम लिया और अपने बालों को शरीर से काट डाला। उसे दूर जाता देख रावण पुनः उसकी ओर लपका।

वेदवती की आँखें प्रचण्ड ज्वाला बनकर रावण को देखने लगीं।

“चूँकि यह शरीर तुम्हारे पापी स्पर्श से दूषित हो गया है, अब यह भगवान् विष्णु के लिए अनुपयुक्त है। हे दुष्ट, तुम्हें इस पाप का फल भुगतना होगा। मैं तुम्हारा सर्वनाश करने के लिए लौटकर आऊँगी।”

यह घोषणा करके वेदवती ने अपनी योगशक्ति द्वारा अपने चारों ओर अग्नि प्रज्वलित की और स्तब्ध रावण के देखते-देखते अपने शरीर को उसमें स्वाहा कर दिया।

अपनी विफल इच्छा के साथ रावण अपने रथ पर लौट आया और उसकी चेतावनी पर रक्तीभर भी विचार नहीं किया। उसका यह

करके जाने से पहले उन्होंने कुटिया के चारों ओर एक संरक्षक घेरा बनाया और उसे अपनी योगसिद्धियों से अलंध्य बनाकर सीता को भीतर ही रहने के लिए कहा।

जब रावण एक भिक्षुक का वेश बनाकर वहाँ आया और उसने लक्ष्मण-रेखा को पार करने के लिए पग बढ़ाया, वह झुलस गया। यह समझकर कि वह उस रेखा को पार नहीं कर सकता, उसने सीता को बाहर आने के लिए कहा। जैसे ही सीता रेखा के निकट पहुँची, रेखा से अग्नि प्रज्वलित हो गयी, किन्तु सीता चलती रही और उसे पार कर गयी। रावण उल्लास से भर उठा। सीता स्वेच्छा से उसके जाल में चली आ रही थी। किन्तु रावण को बिल्कुल ज्ञान नहीं था कि क्षणभर में एक गुप्त अदला-बदली हो चुकी थी। वह जिसका अपहरण करना चाहता था, वह उसका सर्वनाश करने के लिए आगे बढ़ रही थी।

जब सीता अग्नि से गुजर रही थी, अग्निदेव ने सीता को अपने आश्रय में ले लिया और

अवसर दिया।

रावण को इस अदला-बदली का कोई भान नहीं था। रावण की कैद में वेदवती श्रीविष्णु से विरह के गहन भावनाएँ प्रदर्शित करने लगी, जो इस समय धरती पर श्रीराम के रूप में थे। दैव व्यवस्था से उन्हें अच्छी तरह सीतादेवी की भूमिका निभाने के लिए ज्ञान और भावनाएँ दी गयी थीं।

प्रताङ्गना द्वारा प्रतिशोध

लंका में रात हुए घण्टे बीत चुके थे। तथापि रावण सीता की उत्कण्ठा में करवटें बदल रहा था। उसके पास मन्दोदरी जैसी सुन्दर पतिव्रता पत्नी थी, किन्तु वह उसके लिए मात्र औपचारिकता रह गयी थी। सीता की तुलना में मन्दोदरी उसे बिल्कुल आकर्षित नहीं करती। अन्य रानियों एवं दासियों के साथ भोग करके भी उसके मन में सीता के प्रति आकर्षण कम नहीं होता।

सीता! सीता! सीता! वह उसके इतने निकट होकर भी कितनी दूर थी। उसे प्राप्त करने की चाह में उसने बिना सोये कितनी रातें काटी थीं। किन्तु न सीता मानी, न रावण की इच्छा शान्त हुई। किसी भी प्रकार का प्रलोभन सीता को विचलित नहीं कर पा रहा था।

रावण सीता पर बल का प्रयोग नहीं कर सकता था। वर्षों पूर्व देवता नलकूवर की पत्नी रम्भा का अपहरण करने के बाद नलकूवर ने उसे शाप दिया था। आज रावण उस शाप को कोस दे रहा था। उसे आभास हुआ कि रम्भा के साथ भोग में उसे जो सुख मिला था, सीता के विरह में होने में वाली ज्वलनशील पीड़ा उससे लाखों गुना अधिक है। निःसन्देह रम्भा सुन्दर थी, किन्तु उसके प्रति रावण का आकर्षण क्षणिक था। उसके साथ भोग करके रावण ने उसे छोड़ दिया। कुछ क्षणों के इन्द्रियभोग के बदले उसे ऐसा शाप मिला जो आज उसके दीर्घ इन्द्रियभोग में बाधा बन बैठा था। यदि उस दिन उसने रम्भा को छोड़ दिया होता, वह सीता को लंका लाते ही उसके साथ मनचाहा

कई बार दैव-व्यवस्था से पीड़ित व्यक्ति लौटकर आता है और अत्याचारी को दण्ड देने के लिए कर्म का साधन बनता है।

अतिक्रमण उसे कितना महँगा पड़ेगा, उसे इसका कोई अनुमान नहीं था।

कई बार दैव-व्यवस्था से पीड़ित व्यक्ति लौटकर आता है और अत्याचारी को दण्ड देने के लिए कर्म का साधन बनता है। जब कामुक रावण ने सीतादेवी के अपहरण का प्रयास किया, उस समय वेदवती को वह अवसर प्राप्त हुआ।

गुप्त अदला-बदली

वनवास के समय एक दिन लक्ष्मण को कुछ समय के लिए सीता को अकेला छोड़ना पड़ा। वस्तुतः वह रावण के ही षडयन्त्र का एक भाग था। सीतादेवी के संरक्षण का पूरा उत्तरदायित्व लक्ष्मण के ऊपर था। यह विचार

उसके स्थान पर बिल्कुल सीता जैसी दिखने वाली वेदवती वहाँ प्रकट हो गयी। वर्षों पूर्व जब वेदवती ने अग्नि में स्वयं स्वाहा किया था, उस समय अग्निदेव उसे अपने आश्रम ले गये, जहाँ उसने तपस्या करना जारी रखा। और आज अग्निदेव ने असली सीता को लेकर माया-सीता को रावण के सामने प्रस्तुत किया था। इस अदला-बदली के प्रमुखतः दो कारण थे - सीतादेवी की पवित्रता की रक्षा, क्योंकि वे लक्ष्मी थीं और केवल श्रीराम के लिए थीं। उन्हें रावण के अपवित्र स्पर्श द्वारा दूषित होने से बचाना था। और इस अदला-बदली ने वेदवती को भी रावण के साथ अपना पुराना खाता बराबर करने का

व्यवहार कर सकता था।

उसने सीता पर बल प्रयोग करने का विचार भी किया। हो सकता है कि नलकूवर का शाप काम न करे। हो सकता है कि उस शाप के भय के कारण सीता का भोग न करके वह मूर्ख बन रहा हो। सीता के भोग की तड़प में वह करवटें बदलता रहा। वासना की अग्नि में उसका शरीर भभक रहा था, किन्तु तभी ब्रह्माजी के शब्दों का स्मरण हो आया।

आरम्भ में रावण ने नलकूवर के शाप को गम्भीरतापूर्वक नहीं लिया, किन्तु रावण को अनेक वरदान देकर शक्तिशाली बनाने वाले ब्रह्माजी ने उसे चेतावनी देते हुए कहा था, “मेरे वरदान इस शाप से तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकेंगे। ऐसे शाप मुझसे भी श्रेष्ठ स्रोत द्वारा शक्ति प्राप्त करते हैं।”

इन शब्दों का स्मरण करके रावण निराश-हताश अपने बिस्तर में सिकुड़ गया। वह स्वयं अपने हाथों मूर्ख नहीं बनना चाहता था। यदि सीता पर बल प्रयोग करते समय वह उस शाप के कारण मर जायेगा तो संसार के लिए उपहास का पात्र ही बनेगा। नहीं। भले ही सीता सुन्दर हो, किन्तु इतना अपमान असहनीय होगा। उसे सीता को मनाने का कोई और मार्ग खोजना होगा। किन्तु क्या? अतृप्त कामवासना द्वारा पीड़ित करवटें बदलते हुए वह मार्ग खोजने के लिए संघर्ष करने लगा।

रावण समझ नहीं पाया कि वह अपना बोया हुआ ही काट रहा है। योगिनी वेदवती लौट आयी थी और उसने रावण के भीतर ऐसी अग्नि प्रज्ज्वलित की जो क्रूरतापूर्वक उसे प्रतिक्षण दध कर रही थी। रावण के कारण वेदवती को केवल कुछ क्षणों के लिए अग्नि में जलना पड़ा था। किन्तु वेदवती द्वारा उत्पन्न अग्नि में रावण कई दिन, सप्ताह और महीनों जला। और अभी तो वह अग्नि प्रचण्ड रूप धारण करने वाली थी।

शोक द्वारा प्रतिशोध

श्रीराम एवं उनकी सेना के विरुद्ध युद्ध में

एक-एक करके रावण के सेनापति, पुत्र तथा उनका बलशाली भाई कुम्भकरण मारा गया। वे सभी योगिनी के क्रोध की अग्नि में भस्मीभूत हो गये।

और तब उस अग्नि ने अपना सर्वाधिक विकराल रूप दिखाया - रावण का परम पराक्रमी एवं प्रिय पुत्र मारा गया।

जब इन्द्रजीत का शब रावण की सभा में लाया गया, रावण मूर्च्छित होकर गिर पड़ा। स्वयं को सम्भालते हुए वह उठा और इन्द्रजीत के गुणों एवं उपलब्धियों का वर्णन करते हुए पीड़ित अवस्था में रोने लगा। थोड़ी देर में उसका शोक तीव्र प्रकोप बन गया। किसी

को उसके इस ज्वालामुखी में स्वाहा होना पड़ेगा। किन्तु किसे? वह कल युद्धभूमि में इन्द्रजीत के हत्यारों की ऐसी दुर्दशा करेगा कि उन्हें अपने जन्म पर खेद होगा। किन्तु इस समय वह अपने इस क्रोध को किसी पर उतारना चाहता था। किन्तु किसपर? सीता। हाँ, सीता। “इस चुड़ैल के कारण ही मेरे पुत्र की मृत्यु हुई है। वही मेरे सम्पूर्ण कुल की घातिका बनकर आयी है। आज वह मेरे हाथों नहीं बचेगी।” रावण अपने सिंहासन से उठ गया। रक्तरंजित नेत्रों से उसने अपनी भयावह तलवार निकाली।

द्रुतगति से अपने महल से बाहर निकलते

Sky Seekers
Uplifting your Consciousness

Nepal Yatra

20th-30th June 2022

Place to Visit:

- Patna
- Janakpur
- Sita Marhi
- Kathmandu
- Pashupatinath Temple
- Syambhunath Temple
- Budhanikanth Temple
- Darbar Chowk
- Pokhara
- Muktinath Temple
- Lumbini
- Goraknath Temple, Gorakhpur

Lecture will be given by H G Shyamanand Prabhu

FOR REGISTRATION

9324207533

**9324581718
9930141824**

हुए वह चिल्हाया, “सीता तुम मेरे पुत्र की हत्यारन हो। आज तुम मेरे हाथों मारी जाओगी!”

अपने पुत्र की मृत्यु का समाचार सुनकर मन्दोदरी मूर्छित होकर गिर पड़ी थी। अब अपने पति के ये बचन सुनकर वह तुरन्त उठी और रावण का हाथ पकड़ लिया।

“स्वामी, वीर पुरुष अबला स्त्री का कभी वध नहीं करते। अपने पुत्र का प्रतिशोध लेने के लिए यह क्रूर कार्य न करें। इसके आपके नाम पर कलंक लगेगा।”

रावण ने गहरी साँस ली। मन्दोदरी की सलाह उसपर भारी पड़ी, किन्तु वह उसकी सच्चाई को नकार नहीं सका। प्रतिशोध को कल तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।

रावण समझ नहीं सका कि प्रतिशोध का कार्य पहले ही आरम्भ हो चुका है, और वह प्रतिशोध का आरम्भकर्ता नहीं अपितु उसका अंतिम बिन्दु है। और यह प्रतिशोध उसकी मृत्यु के साथ ही समाप्त होगा।

मृत्यु द्वारा प्रतिशोध

श्रीराम एवं रावण के बीच भीषण युद्ध हुआ। रावण अपने पूरे कौशल के साथ युद्ध कर रहा था, किन्तु श्रीराम का कौशल एवं गति उससे कहीं श्रेष्ठ थी। तथापि श्रीराम उसके अतिसंवेदनशील अंग को भेद नहीं पा रहे थे। वह था उसका हृदय। क्यों? क्योंकि रावण के हृदय में सीता बैठी थी।

रावण निरन्तर सीता के बारे में सोच रहा था। सीता को पाने की उसकी इच्छा रत्तीभर भी कम नहीं हुई थी। भक्त अपने हृदय में सीता-राम का स्मरण करके परम सौभाग्य का अनुभव करते हैं। किन्तु रावण के लिए सीता एक शाप बनकर बैठी थी। वह सीता के माध्यम से भक्ति नहीं अपितु इन्द्रियभोग चाहता था। उसकी कुत्सित इच्छा के साथ प्रतिदान करते हुए सीता ने एक ऐसी अतृप्ति अग्नि का रूप लिया जो उसे प्रतिक्षण जला रही थी।

जब तक रावण के हृदय में सीता थी, तब तक राम का तीर वहाँ आधात नहीं कर सका। रावण क्रोधावेश में युद्ध कर रहा था। उसने ऐसे अख्त चलाये जो स्वर्गराज का वध भी कर सकते थे, फिर इस धरती के किसी राजकुमार का क्या कहना। किन्तु आश्चर्य, श्रीराम ने उसके सारे अस्त्रों को निरस्त कर दिया। इतना ही नहीं, पलटवार करते हुए श्रीराम ने उसे बार-बार घायल भी किया। यह मानवीय राजकुमार अवश्य विशेष है। अन्यथा राम और उसकी वानर सेना लंका की अजेय सेना का इस प्रकार विनाश कैसे कर सकती थी?

रावण युद्ध में मारे गये सारे योद्धाओं का स्मरण करने लगा। जैसे ही कुम्भकरण और इन्द्रजीत के विचार उसके मन में व्याप्त हुए, क्षणभर के लिए सीता का विचार वहाँ से निकल गया।

श्रीराम के लिए रावण के हृदय को बींधने के लिए वह क्षण पर्याप्त था। श्रीराम का अचूक तीर अपने लक्ष्य पर जाकर लगा। जिस राक्षस के क्रोध से धरती काँपती थी, अन्ततः वह पीड़ा में कराहता हुए धरती पर गिर पड़ा।

प्रतिशोध पूर्ण हुआ। काम के उस मूर्तिमान स्वरूप की अब कोई कामनाएँ नहीं रह गयी थीं। प्रतिशोध की अग्नि कामवासना का रूप लेकर अनेक महीनों तक उसके चित्त को जलाती रही, और अब अन्येष्टि की अग्नि उसे जलाकर राख का ढेर बना देगी।

योगिनी पापी को दण्ड देने आयी थी। उसका कार्य पूरा हुआ और वह जानती थी कि अब उसके लौटने का समय आ गया है।

भगवान् विष्णु को प्राप्त करने के लिए उसके हृदय में धधक रही शुद्ध अग्नि अब पहले से कहीं अधिक देवीप्यमान हो गयी थी। लगभग एक वर्ष तक सीता के मनोभाव को स्वीकार करने के फलस्वरूप उसने श्रीराम की नित्य संगिनी की स्थिति का प्रत्यक्ष अनुभव किया था। यद्यपि वह सीता की

भक्ति के सम्मुख स्वयं को दीन मान रही थी, तथापि एक दिन वैसी ही भक्ति प्राप्त करने की इच्छा उसके चित्त में पनपने लगी।

अग्नि द्वारा अदला-बदली

रावण की मृत्यु के बाद सीता को मुक्त करके श्रीराम के सम्मुख लाया गया। किन्तु जब श्रीराम ने सीता को अग्नि परीक्षा करके अपनी पवित्रता का प्रमाण देने के लिए कहा तो सभी भौंचके रह गये।

योगिनी ने गहरी साँस ली। वह जानती थी कि वास्तव में अग्नि परीक्षा का उद्देश्य अग्नि के माध्यम से एक और अदला-बदली है। इस धरती पर श्रीराम के साथ उसका मिलन सम्भव न था। अब उसे पुनः अपनी तपोभूमि जाना होगा। पूर्वजन्म में हिमालय में तपस्या करके तथा इस जीवन में रावण द्वारा दिये गये प्रलोभनों तथा प्रताङ्नाओं को सहन करने से उसकी शुद्धता में निरन्तर निखार आ रहा था। शीघ्र ही वह श्रीराम के नित्य धाम में उनका संग प्राप्त करेगी, जहाँ वे धरती पर अपनी लीलाएँ करने के साथ-साथ सदा निवास करते हैं।

अग्नि ने उसे रावण से बचाया; अग्नि ने उसे श्रीराम के लिए बचाया और अग्नि ही श्रीराम की ओर उसका मार्ग प्रशस्त करेगी। अग्निदेव से अपने स्वामी के साथ मिलन की प्रार्थना करते हुए उसने अपने नेत्र बन्द किये और अग्नि में प्रविष्ट हो गयी। अधिकांश लोगों से अनभिज्ञ एक बार पुनः अदला-बदली हुई। एक ओर से योगिनी ने अग्नि में प्रवेश किया और दूसरी ओर से सीतादेवी बाहर आ गयीं।

चैतन्य चरण दास इस्कॉन चौपाटी में रहते हैं। उन्होंने बाईस से अधिक पुस्तकों की रचना की है। भगवद्गीता पर प्रतिदिन प्रकाशित होने वाले उनके जीवनोपयोगी लेखों को पढ़ने के लिए thespiritualscientist.com पर जायें।

हरिनाम संकीर्तन

अपनी वर्तमान अवस्था में अज्ञानता के कारण हम अपनी पहचान शरीर के आधार पर करते हैं। वह अज्ञानता है आत्मज्ञान की अज्ञानता। इसके कारण यदि मेरा जन्म भारत में हुआ है तो मैं सोचता है कि “मैं भारतीय हूँ” आपका जन्म इंग्लैण्ड में हुआ तो आप सोचते हैं “मैं अंग्रेज हूँ” तो प्रत्येक व्यक्ति इसी प्रकार सोच रहा है। परन्तु वास्तव में हम न भारतीय हैं, न अंग्रेज हैं, न जापानी हैं और न जर्मन। हम आत्मा हैं। भगवान् के अंश हैं। इसलिए यही आत्मज्ञान है। जब तक हम आत्मज्ञान के स्तर पर नहीं आते तब तक हमें अपने सारे कार्यों में केवल पराजय मिलेगी।

इसलिए हमने स्वयं देखा है कि शिक्षा में इतनी प्रगति के बावजूद, आर्थिक प्रगति के बावजूद, ज्ञान के क्षेत्र में विकास के बावजूद भी हम चारों ओर समस्याओं से घिरे हैं। यह हमारी वर्तमान सम्यता की पराजय है क्योंकि हम नहीं जानते कि हम कौन हैं। हम आत्मा हैं। तो हमें इसका साक्षात्कार करना होगा। पाँच हजार वर्ष पूर्व भगवान् श्रीकृष्ण ने स्वयं भगवद्गीता का ज्ञान हमें दिया। हम इन ग्रन्थों को विश्व की विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित कर रहे हैं। यदि आप इन्हें पढ़ना चाहते हैं, यदि आप इस आध्यात्मिक आनंदोलन को तर्क एवं बुद्धियुक्त दृष्टिकोण से समझना चाहते हैं तो हमारे पास अनेक पुस्तकें हैं। आप उन्हें पढ़ें और उन्हें समझें। अन्यथा हमारी पद्धति अत्यन्त सरल है। आप केवल हरे कृष्ण महामंत्र का कीर्तन करें। इसमें केवल सोलह शब्द हैं - हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण हरे हरे, हरे राम हरे राम राम हरे हरे।

(रथयात्रा उत्सव, लंदन, 13 जुलाई 1972)



एक भार्यशाली आत्मा

एक पुण्यात्मा सिख द्वारा कृष्णभावना की सराहना

-राधिका कृपा देवी दासी

जीवन में कुछ अनुभव हमारी चेतना पर गहरी छाप छोड़ जाते हैं। ये अनुभव हमारे जीवन को परिवर्तित कर सकते हैं और अन्यों के लिए एक उदाहरण भी स्थापित करते हैं। यहाँ मैं अपने मौसाजी की कथा सुनाने जा रही हूँ। मध्यम कद के और पगड़ी से सजे मेरे सिख मौसा के रूप निर्मल किन्तु दृढ़ था। कुल मिलाकर वे एक सरल व्यक्ति थे।

मेरे बचपन की स्मृतियाँ तरन तारन में बिताये गये सुन्दर दिनों एवं वहाँ की विभिन्न घटनाओं से भरी है। तरन तारन पवित्र नगरी अमृतसर से कुछ ही मील दूर स्थित है। इस छोटे-से कस्बे में मेरी मौसी अपने पति एवं बच्चों के साथ एक बड़े घर में रहा करती थी। घर का विशाल प्रवेश द्वार ठोस लकड़ी का बना था। घर के चारों ओर चालीस एकड़ में फैली उनकी विशाल सम्पत्ति थी। गोशाला में अनेक जर्सी गायें थीं। मैं घर के चारों ओर बने ईंटों के मार्ग से होकर खेतों में खेलने निकल जाया करती। उनका परिवार अत्यन्त

धनी एवं इलाके में जाना-माना था। उनके कई व्यापारिक व्यवसाय एवं दुकानें थीं।

अक्सर क्रिसमस की छुट्टियों में पखवाड़े के लिए हमारे स्कूल बन्द हो जाते और उस दौरान मैं अपनी मौसी के घर जाया करती। मुझे वहाँ रहना बहुत अच्छा लगता – ईंटों के मार्ग पर साइकिल चलाना, खेतों में ठहलना और गायों के साथ खेलना। विशेष रूप से हम संध्या समय गोशाला में जाते और गायों को दुहता देखते। ग्वाले प्रसन्नतापूर्वक हमें गायों का दुहना दिखाते और कई बार हमें भी दुहने के लिए बुलाते।

मेरे मौसा दारजी

सिखों के पवित्र स्थान तरन तारन में अमृतसर स्थित स्वर्णमंदिर की एक प्रतिकृति है और स्वर्णमंदिर के समान वह भी चारों ओर सरोवर से घिरा है। मेरे मौसाजी अत्यन्त पुण्यवान थे। वे कठोरतापूर्वक अपनी दिनचर्या का पालन करते, जिन्हें उन दिनों हम अपने

नन्हे मन द्वारा समझ नहीं पाते। सभी उन्हें “दारजी” पुकारते। पंजाबी में किसी बड़े व्यक्ति को सम्मानपूर्वक इसी सम्बोधन से पुकारा जाता है। प्रतिदिन बिना चूके वे प्रातः ३ बजे उठ जाते और तरन तारन के स्वर्णमंदिर में जाते। वे लगभग साढ़े तीन घण्टे वहाँ हो रहे मधुर कीर्तन में भाग लेकर श्रीभगवान् का गुणगान करते।

प्रातः ४ बजे लौटकर वे उस कक्ष में जाते जहाँ सिखों का पवित्र ग्रन्थ श्रीग्रन्थ साहिब सम्मान रखा रहता। कक्ष में ताजे कटे फलों के साथ दूधभरा गिलास रखा रहता और वे आनन्दपूर्वक श्रीग्रन्थ साहिब पढ़ते। तत्पश्चात् वे फलों एवं दूध का नाश्ता करते और साइकिल पर अपने कार्यालय के लिए निकल जाते। मुझ बच्ची को आश्चर्य होता; उनके पास कारें थीं, चालक थे, किन्तु जब भी सम्भव होता वे साइकिल पर जाना पसन्द करते।

दारजी कम ही बोलते थे। परिजनों से केवल आवश्यक बातें ही करते अथवा अध्यात्म की बातें करते। बचकाने स्वभाव के कारण मैं धर्म और अध्यात्म को कट्टरवाद माना करती थी। दिल्ली जैसे महानगर में पली-बढ़ी होने के कारण मैं धर्म के विषय में व्याखान देने वाले लोगों को रुद्धिवादी मानती थी।

समय के साथ-साथ

मेरा लालन-पालन एक खुले विचारों वाले परिवार में हुआ। हम सभी धर्मस्थानों पर जाया करते, चाहे गुरुद्वारा हो, मंदिर हो अथवा गिरजाघर या मस्जिद। मेरे पिता एक सफल निर्यात का व्यवसाय करते थे और उसी के चलते हम दुनिया को जानने लगे। बचपन में ही हमने संसार के अनेक भागों की यात्रा कर ली थी। मेरे धर्मपरायण माता-पिता ने अपने बच्चों को अच्छे संस्कार दिये। उन्होंने घर के एक विशाल कक्ष में श्रीग्रन्थ साहिब को स्थापित करके दर्शाया कि हमें



गुरु एवं श्रीभगवान् का कितना सम्मान करना चाहिए। मेरी माँ प्रतिदिन प्रातः 3:30 को उठ जाती और स्नान करके “बाबाजी के कमरे” में प्रवेश करती, जहाँ श्रीग्रन्थ साहिब रखी थी। नितनेम के बाद वे रसोई में जाकर रंधन आरम्भ करती। 5:30 - 6:00 बजे वे हम दोनों बहनों को उठाती और हम भी स्नान करके सबसे पहले ग्रन्थ साहिब के कुछ पन्ने पढ़ते।

युवावस्था में मैंने फैशन डिजाइनिंग की पढ़ाई की और व्यवसाय करने लगी। मेरा विवाह हुआ और मेरे दो बच्चे हुए। 1998 में सहसा मेरे पिता का देहान्त हो गया और मेरी

दुनिया मानो ध्वस्त हो गयी। जिस समय मैंने सुना कि अब वे नहीं रहे, उसी समय मेरे मन में उद्घिन्न करते कुछ प्रश्न खड़े होने लगे – “हम कौन हैं? भगवान् कौन हैं? हमारा जन्म क्यों हुआ है? जीवन का उद्देश्य क्या है?”

मैं उत्तरों के लिए लालायित थी और ग्रन्थों में खोजने के बाद भी मुझे इनके उत्तर प्राप्त नहीं हुए। कदाचित् मेरी तीव्र खोज को देखते हुए श्रीकृष्ण ने मुझपर अपनी कृपा की। एक दिन मैं वृन्दावन स्थित श्री श्रीकृष्ण-बलराम मंदिर गयी और मेरा जीवन बदल गया। श्रील प्रभुपाद की कृपा से मुझे अपने प्रश्नों के उत्तर मिल गये और श्रीमती गाधारानी

ने मुझे भक्तिमय जीवन का आश्रय प्रदान किया। दो वर्ष पश्चात् मुझे एवं मेरे पति को प.प. गोपालकृष्ण गोस्वामी महाराज से दीक्षा प्राप्त हुई। जीवन सरल, सादा एवं सन्तुष्ट हो गया।

अपने आध्यात्मिक पिता तथा श्रीभगवान् के आश्रय ने मुझे जीवन का परमसुख प्रदान किया। मेरे परिचित इस परिवर्तन को देखकर आश्चर्यचकित रह गये। वे जीवन को देखने के मेरे इस दृष्टिकोण पर विश्वास नहीं कर पा रहे थे।

दारजी और मैं

इस परिवर्तन को देखकर जो व्यक्ति सबसे अधिक प्रसन्न हुए वे थे दारजी। मैंने कभी ऐसा सोचा भी नहीं था। मैंने उन्हें अपने धर्म के प्रति अत्यन्त समर्पित एवं सुदृढ़ देखा था, इसलिए उनकी प्रतिक्रिया ने मुझे विस्मित कर दिया। किन्तु मैं प्रसन्न थी।

अक्सर पारिवारिक कार्यक्रमों में हमारी भेंट हो जाती। मुझे अनेक प्रसंग स्मरण हैं जब हम मौज-मस्ती कर रहे अपने सम्बन्धियों की भीड़ से दूर आध्यात्मिक चर्चाएँ कर रहे होते। मैं अपने पति एवं दारजी के साथ डीजे के भड़कीले संगीत एवं नाचते-गाते सम्बन्धियों से हटकर कहीं कोने में शास्त्रों की चर्चा करती। दारजी श्रीग्रन्थ साहिब से माया तथा मनुष्य जीवन के उद्देश्य पर बल देते श्लोक उद्धृत करते, जबकि मैं भगवद्‌गीता, श्रीमद्भागवतम् तथा श्रील प्रभुपाद की अन्य पुस्तकों से श्लोक पढ़ती अथवा उद्धरण देती। मैं बचपन में ग्रन्थ साहिब के जो श्लोक गाती थी, वह भी उन्हें सुनाती।

श्रील प्रभुपाद का आशीर्वाद रहा कि दारजी मेरे ज्ञान से प्रभावित हुए। वे अक्सर फोन करके मेरे साथ अध्यात्म के विषय पर लम्बी चर्चाएँ करते। एक दिन उन्होंने मुझसे उनके लिए मेरे गुरु महाराज की कृपा माँगने के लिए कहा। मैं आश्चर्यचकित रह गयी। मैंने इसकी कभी अपेक्षा नहीं की थी।



कुछ ही दिनों बाद मौसाजी को दिल्ली आना था, इसलिए मैंने तुरन्त अपने गुरु महाराज से बात की और मुझे पता चला कि वे ठीक तीन दिन बाद हमारे घर के निकट एक स्थान पर प्रवचन देने के लिए आ रहे हैं।

जनवरी की सर्द शाम थी और पूरे उत्साह से भरे दारजी हमारे साथ उस कार्यक्रम में गये। कार्यक्रम एक विशाल घर के खुले बगीचे में हो रहा था। चूँकि गुरु महाराज धुँधभरी रात को वृन्दावन से आ रहे थे, उन्हें यहाँ पहुँचने में दो घण्टा देरी हो गयी। दारजी धीरता एवं आतुरतापूर्वक उस ठण्ड में उनकी प्रतीक्षा करते रहे। उन्होंने एक बार भी शिकायत नहीं की। उन्होंने अद्भुत नम्रता का प्रदर्शन किया, जो सामान्यतया उन जैसे व्यक्ति के लिए अपेक्षित नहीं था।

आशीर्वाद

गोपालकृष्ण गोस्वामी आये और जब वे व्यासासन पर बैठ रहे थे मैंने ‘‘पंजाब से मेरे मौसाजी’’ कहकर महाराज से उनका परिचय

करवाया। गुरु महाराज को देखकर आश्चर्य हुआ कि पचासी वर्ष की अवस्था में भी वे हड्डे-कड्डे थे। महाराज प्रवचन के लिए व्यासासन पर बैठ गये और मेरे मौसाजी उनके चरणों पर पालथी मारकर। मैंने उनसे पीछे कुर्सी पर आराम से बैठने का आग्रह किया, किन्तु उन्होंने मना कर दिया।

उन्होंने पुनः मुझे दर्शाया कि सच्ची कृपा किस प्रकार प्राप्त की जाती है। वे एकाग्रचित्त से पूरा एक घण्टा वहाँ बैठे रहे। प्रवचन के अन्त में दारजी ने हमारे साथ गुरु महाराज को प्रणाम किया। गुरु महाराज की वाणी सुनकर दारजी मंत्रमुग्ध हो गये थे। शीघ्र ही वे अपने घर लौट गये और हम भी अपने भक्तिमय एवं गृहस्थ कार्यों में व्यस्त हो गये।

आठ महीने बाद मेरे मौसेरे भाई ने फोन करके सूचना दी कि दारजी को लकवा मारा है। मेरी माँ तुरन्त उन्हें देखने दौड़ पड़ी। एक शल्यचिकित्सा होने के कारण मैं नहीं जा सकी, किन्तु मेरा मन वहीं था। पहुँचते ही मेरी माँ ने मुझे फोन किया। दारजी उनसे

बार-बार मुझे फोन करके कुछ कहने का आग्रह कर रहे थे। माँ ने कहा कि दारजी चाहते हैं तुम उनके लिए भगवान् से प्रार्थना करो। वे बार-बार मुझसे मिलने के लिए कह रहे थे। उनकी याचना सुनकर मैं तड़प उठी। मैंने तुरन्त गुरु महाराज को फोन लगाया। दुःखों से भरे संसार में वे ही मेरे एकमात्र आश्रय हैं। मैंने उन्हें दारजी की स्थिति के बारे में बताया। गम्भीर स्वर में वे बोले, “कृपया अपने मौसाजी को फोन करो और उनसे ‘हे कृष्ण’ कहो।”

मैंने तुरन्त अपनी माँ को फोन करके गुरु महाराज का यह संदेश सुनाया और उनसे दारजी के कान पर फोन लगाने के लिए कहा। माँ ने जो बताया वह दुःखदायी था। उसने कहा कि लकवे के कारण दारजी की जीभ टेढ़ी हो गयी

है और उनकी बातें समझना बहुत कठिन हो रहा है। उनके साथ रहने वाले भी उनकी बातें समझ नहीं पा रहे हैं। क्षणभर के लिए मैं निराश हो गयी, किन्तु गुरु महाराज के वचन मेरे कानों में गूँज रहे थे। मैंने दारजी के कान पर फोन लगाने के लिए कहा। अन्ततः मेरा भाई मान गया। उनके कान के पास फोन रखा गया और बिना समय गँवाये मैंने पूरे हृदय एवं भाव से कहा, “हे कृष्ण दारजी।”

फिर जो हुआ उससे सभी आश्चर्यचकित रह गये। दारजी ने पूरे उत्साह एवं स्पष्ट स्वर में कहा – “हे कृष्ण हे राम।” उनके स्वर में भरे उत्साह को देखकर मैं चकित रह गयी। उनका स्वर इतना स्पष्ट था कि मेरी आँखों से आँसू बहने लगे। उन्होंने अपने हृदय की गहराइयों से वे शब्द कहे थे। और मैं जानती थी कि गुरु महाराज के शब्दों में विश्वास ने यह जादू किया है।

शीघ्र ही दारजी को फिजियोथेरेपी दी जाने लगी। किन्तु इस अवस्था में पूरी तरह स्वस्थ होना असम्भव था।

कुछ दिनों बाद मैं उनसे मिलने गयी। वे मानसिक रूप से पूरी तरह सजग थे। उन्होंने हमारे साथ जैसे-तैसे आध्यात्मिक विषयों पर चर्चा की। मैंने उनके लिए भगवद्गीता यथारूप का अठारहवाँ अध्याय तथा श्रीग्रन्थ साहिब से कुछ श्लोक पढ़े। वे पूरी तरह शान्त एवं स्थिर थे। निश्चित रूप से इसका श्रेय भगवन्नाम के श्रवण-कीर्तन से आसक्ति को जाता है।

अंतिम अध्याय

उनसे विदाई लेकर हम भारी हृदय के साथ दिल्ली के लिए निकल पड़े। मेरा मन जानता था कि दारजी के साथ यह मेरी अंतिम भेंट थी। दो महीने बाद उनके देहान्त का समाचार आ पहुँचा।

अंतिम क्रिया के लिए मैं अपने पति के साथ तरन तरन आयी। दारजी की सेवा करने वालों ने बताया कि दारजी ने गुरुमुखी लिपि में एक छोटे कागज पर पूरा महामंत्र - हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण हरे हरे, हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे - लिखवाया और सामने जल रही अँगीठी के ऊपर दीवार पर लगवा दिया। लेटे हुए वह उन्हें स्पष्ट दिखायी देता था। यह श्रील प्रभुपाद, गुरु महाराज तथा भगवान् के साथ उनका सम्बन्ध था। यह सुनकर मैं आश्चर्यचकित रह गयी। इसने मेरा हृदय छू लिया और मैं दारजी की सुन्दर आत्मा के प्रति गहन आदर से भर उठी।

मैं सभी वैष्णवों से निवेदन करती हूँ कि वे “हमारे दारजी” की पुण्यात्मा को आशीर्वाद दें, जिससे उन्हें भगवान् श्रीकृष्ण के चरणकमल प्राप्त हो सकें।

राधिकाकृपा देवी दासी ने सिखधर्म में वैष्णव शिक्षाओं पर आधारित एक पुस्तक की रचना की है, जिसका सिन्धी एवं उर्दू सहित पाँच भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। एक अन्तर्राष्ट्रीय प्रचारक के रूप में उन्होंने ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, थाइलैण्ड, जापान, पाकिस्तान तथा इंग्लैण्ड में कृष्णभावनामृत सम्बन्धी चर्चाओं में भाग लिया है।

राजाबिन्दु

मैं तुम्हें सत्य बताता हूँ। जो व्यक्ति अपनी जिद्धा पर मेरे नाम को नृत्य करवाता है, वह मुझे खरीद लेता है। मुझे खरीदने का अन्य कोई मूल्य नहीं है। जो व्यक्ति श्रद्धा अथवा तिरस्कारपूर्वक मेरा नाम लेता है, उसका नाम सदैव मेरे हृदय में रहता है। मेरे हरिनाम के जैसा अन्य कोई ज्ञान, ब्रत, ध्यान, फल, वैराग्य, शान्ति, पुण्य आदि कार्य नहीं है। मेरा नाम ही परममोक्ष, आश्रय, शान्ति, धाम, भक्ति, दर्शन, सुख, ध्यान, पिता, स्वामी, पूजा की विषयवस्तु और परम शिक्षक है। दूसरों को हरिनाम लेते देखकर प्रसन्न होने वाला व्यक्ति परम धाम प्राप्त करता है। हे अर्जुन, इसलिए तुम्हें मेरे पवित्र नाम की आराधना करनी चाहिए। मेरे पवित्र नामों का कीर्तन करो और हरिनाम कीर्तन करने वालों से मैत्री करो।

-श्रीकृष्ण, आदि पुराण

भारतवर्ष पुण्यभूमि है। भारतीयों को जन्म से ही संस्कार मिलते हैं। आज भी आप देखेंगे कि कुम्भमेले के दौरान लाखों लोग गंगाजी में डुबकी लगाने आते हैं, क्योंकि वे जानते हैं यह पुण्य है। तो भारतीयों की रा-रा में आध्यात्मिक खून बह रहा है। दुर्भाग्य से आज के नेता उन्हें भटका रहे हैं और लोग नास्तिक बनते जा रहे हैं। अत्यन्त शोचनीय स्थिति है यह।

-श्रीमद्भागवतम् प्रवचन, दिल्ली,

13 नवम्बर 1973

व्यक्ति को चाहिए कि वह भक्तों का संग करे, हरिनाम कीर्तन करे, श्रीमद्भागवतम् श्रवण करे, मथुरावास करे तथा श्रद्धा एवं भक्तिभाव श्रीमूर्तियों की सेवा करे। भक्ति के ये पाँच अंग सर्वश्रेष्ठ हैं। अल्प मात्रा में भी इन्हें करने से कृष्णप्रेम जागृत होता है।

-श्रीचैतन्य महाप्रभु, चैतन्य-चरितामृत

मध्यलीला 22.128-129

मैं निष्कलंक ख्याति से मण्डित भगवान् श्रीकृष्ण को प्रणाम करता हूँ, जो बद्धजीवों को मुक्ति प्रदान करने के लिए अपने सर्वार्कर्षक निज रूपों में विस्तार करते हैं।

- नारदमुनि, श्रीमद्भागवतम् 10.87.46

भौतिक संसार को भोगने तथा भौतिक बन्धन से मुक्त होने की इच्छा दो पिशाचनियों के समान हैं जो व्यक्ति को ग्रस लेती हैं। जब तक ये पिशाचनियाँ व्यक्ति के हृदय में रहेंगी वह किस प्रकार दिव्य आनन्द का अनुभव कर सकेगा? जब तक ये पिशाचनियाँ हृदय में रहेंगी भक्ति के दिव्य आनन्द के अनुभव की कोई सम्भावना नहीं है।

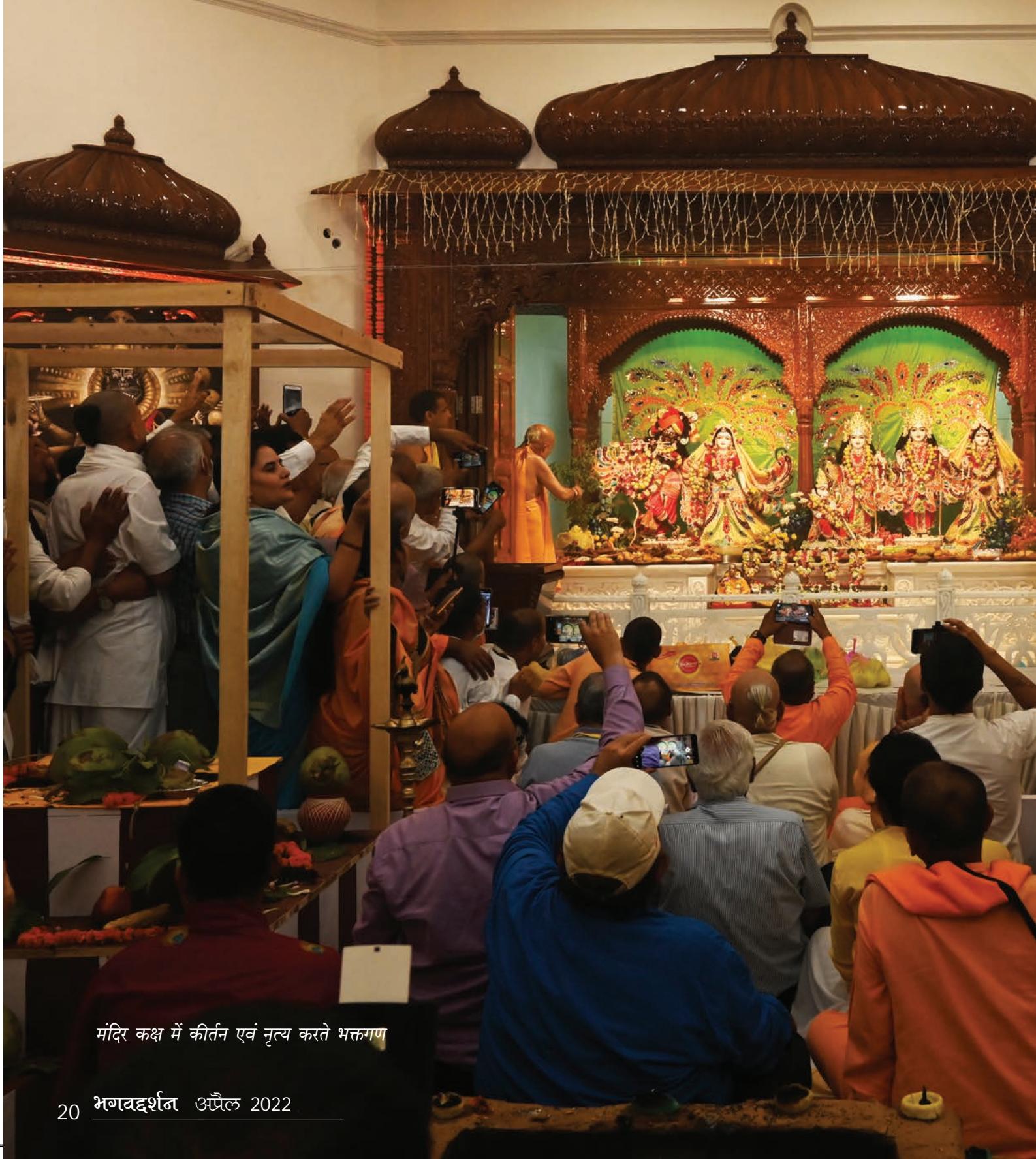
-श्रील रूप गोस्वामी, भक्तिरसामृतसिन्धु 1.2.22

हे भगवान् नरहरि, जो लोग मनुष्य जीवन प्राप्त करके आपकी पूजा नहीं करते, आपके विषय में सुनते नहीं, आपका कीर्तन नहीं करते, आपका स्मरण नहीं करते और अन्य भक्तिमय कार्य नहीं करते वे केवल धौंकनी के समान शवास लेते हैं।

श्याम वर्ण श्रीकृष्ण तथा सुनहरी कान्ति से युक्त श्रीराधा सदैव वृन्दावन में निवास करते हैं और निरन्तर एक-दूसरे को अपने दिव्य प्रेम से अभिभूत करते हैं। उनका सौन्दर्य प्रत्येक प्राणी के मन को हर लेता है और अद्भुत प्रेमभरी लीलाओं के आगार हैं। उनकी ऐसी लीलाएँ नित्य मेरे हृदय में उजागर होती रहें।

-श्रीप्रबोधानन्द सरस्वती,

श्रीवृन्दावन महिमामृत 17.4



मंदिर कक्ष में कीर्तन एवं नृत्य करते भक्तगण

श्री श्री राधा गोविंद धाम का शुभ प्राकट्य

श्रील प्रभुपाद को उनके १२७वें दिव्य आविर्भाव
वर्ष में इस्कॉन फरीदाबाद द्वारा भैंट

- शुभांगी वृन्दा देवी दासी

यह कृष्णभावनाभावित दृष्टि है, ‘ओह, इतनी सारी गगनचुंबी
इमारतें हैं। कृष्ण का एक अच्छा गगनचुंबी मंदिर क्यों नहीं बनाते?’
यह कृष्ण भावनामृत है।

- श्रील प्रभुपाद (25 फरवरी, 1974, मुंबई)

परमपूज्य गोपालकृष्ण गोस्वामी महाराज की कृपा एवं प्रेरणा द्वारा
तथा दानकर्ताओं के उदार समर्थन एवं इस्कॉन फरीदाबाद के भक्त-समुदाय
के अथक प्रयासों से श्रील प्रभुपाद के भाव और मिशन को केन्द्र में रखते
हुए इस्कॉन ने एक और मंत्रमुग्ध करते मंदिर का सफल उद्घाटन किया।
श्रीरामचंद्र विजयोत्सव के शुभ अवसर पर परम पुरुषोत्तम भगवान् श्री
श्रीराधा गोविंद और श्री श्रीसीता राम लक्ष्मण हनुमान अपने विग्रह-रूपों
में हरियाणा के फरीदाबाद शहर में प्रकट हुए। संगमरमर से बना उनका
सुन्दर निवास ‘श्री श्रीराधा गोविंद धाम’ देखते ही आगंतुकों को मोह लेता
है और उन्हें श्रीवृन्दावन धाम ले जाता है।

मंदिर का संक्षिप्त इतिहास

वर्ष 2001 में एक युवा दम्पति श्रीमान् गोपीश्वर दास (मंदिर अध्यक्ष
- इस्कॉन फरीदाबाद) और उनकी पत्नी श्रीमती कृष्णगंगादेवी दासी ने
परम पूज्य गोपाल कृष्ण गोस्वामी महाराज और अन्य वरिष्ठ भक्तों के
आशीर्वाद से फरीदाबाद में पहला नामहट्ट कार्यक्रम आरम्भ किया। उस
समय यहाँ अधिक भक्त नहीं रहते थे, इसलिए कार्यक्रम उन्हीं के घर
आरम्भ हुआ। धीरे-धीरे लोग उनके साथ जुड़ने लगे और जैसे-जैसे भक्तों
की संख्या बढ़ी, उन्होंने प्रमुखतः प्रचारकार्य हेतु 2006 में एक घर किराये
पर लिया।





वर्ष 2007 में प्रमोटर ग्रेटर दिल्ली प्लानर (प्रा.) लिमिटेड के स्वर्गीय श्रीकुलभूषण शर्मा के पुत्र श्रीसुनील शर्मा इस्कॉन के एक भक्त श्रीमान् अद्वैतकृष्ण दास से मिले, जिन्होंने उन्हें इस्कॉन से अवगत कराया। सुनीलजी दिल्ली में श्री श्री राधा पार्थसारथी इस्कॉन मंदिर के दर्शन, वहाँ रहने वाले भक्तों की भक्तिभावना एवं समर्पण और सेवा के उच्च स्तर को देखकर अत्यन्त प्रभावित हुए।

इस्कॉन के भक्तिमय वातावरण को देखकर सुनीलजी के मन में अपने पिता द्वारा फरीदाबाद में बनवाये गये एक मंदिर में भी वैसा ही आध्यात्मिक वातावरण देखने की उत्कण्ठा होने लगी। उन्होंने अपने माता-पिता और भाइयों राजीब एवं अतुल शर्मा के साथ चर्चा की और अन्ततः उनके परिवार ने अधिकारिक तौर पर वह मंदिर इस्कॉन को उपहार में देने का निर्णय किया। सभी कानूनी

औपचारिकताओं के बाद 2008 में इस्कॉन को एक एकड़ भूमि मिल गयी, जिस पर एक मंदिर और गीता भवन नामक एक हॉल बना हुआ था।

गोपीश्वर दास और उनकी पत्नी के मार्गदर्शन में फरीदाबाद का भक्त समुदाय एकजुट हुआ और अथक प्रयास करते हुए नये लोगों को प्रचार करके जोड़ने तथा उन्हें प्रशिक्षित करने लगा। अधिकाधिक भक्त जुड़ने लगे और



गोस्वामी महाराज के करकमलों द्वारा श्रीअनन्तशेष की स्थापना के साथ नवीकरण आरम्भ किया गया था।

इस्कॉन फरीदाबाद के उपाध्यक्ष परमात्मा चैत्य गुरु दास ने गोपीश्वर दास की देखरेख में परियोजना का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व ले लिया। जीर्णोद्धार परियोजना का उद्देश्य मंदिर के मूल स्वरूप को बदलना था। नयी परियोजना में एक विशाल कक्ष, नया एवं बड़ा गर्भगृह, श्रीविग्रहों के लिए अत्याधुनिक रसोई, वेशभूषाओं के लिए नया कक्ष, प्रसादगृह एवं प्रवचन के लिए विशाल कक्ष, निवासी भक्तों के लिए आश्रम, संन्यासियों के लिए अलग कमरे, कार्यालय परिसर, जीवीसी कक्ष, वीआईपी बैठक कक्ष, उपहारगृह एवं अन्य बहुत कुछ था।

आज युवाओं सहित लगभग 2000 लोग मंदिर से जुड़े हैं। मंदिर में नियमित रूप से सार्वजनिक तथा विशेषतः युवाओं के लिए कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं। साथ ही बच्चों में बचपन से ही आध्यात्मिक संस्कार एवं नैतिक मूल्यों की शिक्षा देने के लिए इस्कॉन स्कूल ऑफ कल्चर एंड वैल्यूज (आई. एस. सी. वी.) भी आरम्भ किया गया है।

नवीकरण एवं निर्माणकार्य

किन्तु अब आवश्यकता थी इस्कॉन के मानदण्डों के अनुरूप इस मंदिर के सौन्दर्यीकरण की तथा विग्रह सेवाओं के स्तर को उठाने की। वर्ष 2017 में एक भव्य यज्ञ समारोह, भूमि पूजा और परम पूज्य गोपालकृष्ण

श्री श्रीराधा-गोविन्द (बायें) का अभिषेक करते प.पू.भानु स्वामी (ऊपर)। सेवातुल्य प्रभु की अध्यक्षा में अग्नि यज्ञ करते पुजारी (ऊपर बीच में)। भगवान् का पहला दर्शन खुलने पर उन्हें पवित्र ग्रंथों का दर्शन कराती कन्याएँ (दायें)।





परियोजना की नींव - भक्तों का प्रेम और प्रतिबद्धता

तो हमारा आंदोलन अत्यन्त व्यावहारिक है। आपके पास जो भी प्रतिभा है, जो भी शक्ति है, आपको जो भी शिक्षा मिली है वह पर्याप्त है। आपको कुछ भी अलग सीखने की आवश्यकता नहीं है। आपको जो कुछ भी मिला है, आप जिस भी स्थिति में हैं, आप श्रीकृष्ण की सेवा कर सकते हैं। ऐसा नहीं है कि आपको पहले कुछ सीखना है और फिर आप सेवा कर सकते हैं। नहीं। सेवा ही सिखा रही है। जितना अधिक आप सेवा करने का प्रयास करते हैं, उतना अधिक आप अनुभवी सेवक बनने की दिशा में उन्नति करते हैं। हमें अलग से किसी प्रतिभा अथवा बुद्धि की आवश्यकता नहीं है।

- श्रील प्रभुपाद प्रवचन, मायापुर, 1
मार्च 1977

इस्कॉन फरीदाबाद के प्रत्येक भक्त ने भगवान् के नये निवास के निर्माण हेतु अपने समय, प्रयास और संसाधनों का सर्वश्रेष्ठ

योगदान दिया। इस मंदिर की भव्यता और सुन्दरता भक्तों के प्रेम एवं उनकी और प्रतिबद्धता का परिणाम है।

भले ही अनुसंधान एवं योजना का आरम्भिक चरण हो अथवा उन योजनाओं के क्रियान्वन का चरण, इस मंदिर के निर्माण

का प्रत्येक चरण भक्तों के अगाध परिश्रम की गाथा गाता है। गोपीश्वर दास एवं परमात्मा चैत्यगुरु दास ने विशेषज्ञों एवं भक्तों के सक्रिय समर्थन के साथ मंदिर निर्माण हेतु ठेकेदारों एवं अन्य महत्वपूर्ण तत्त्वों की व्यवस्था करने के लिए देशभर के विभिन्न स्थानों एवं मंदिरों





श्री श्रीसीताराम,
लक्ष्मण एवं हनुमानजी
(बिल्कुल बायें)।
मंदिर अध्यक्ष श्रीमान्
गोपीश्वर दास अपनी
धर्मपत्नी श्रीमती
कृष्णगंगा देवी दासी
वास्तुहोम की पूजा
कराते हुए (बायें)।
तथा विश्वविख्यात
माधवदास कीर्तन करते
हुए (बायें नीचे)

का दौरा किया।

इस परियोजना के मुख्य वास्तुकार श्रीपंकज महानी के साथ श्री राजीव गुप्ता इसके संरचनात्मक वास्तुकार रहे। इन दोनों ने अपने अनुभवों एवं प्रतिभा द्वारा इस परियोजना को वर्तमान स्वरूप देने के लिए कठोर श्रम किया और अपनी सेवाओं का कोई शुल्क नहीं लिया।

एक सेवानिवृत्त सिविल इंजीनियर 70 वर्षीय श्रीमान् आर.एस.चौहान ने भी श्री श्रीराधा-गोविन्द की सेवा में प्रेमपूर्वक निःशुल्क अपने ज्ञान एवं अनुभव का योगदान दिया। श्रीमान् चौहान 1974 में प्रतिष्ठित दिल्ली कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग से स्नातक हैं और सीडब्ल्यूसी के कार्यकारी अभियंता के रूप में सेवानिवृत्त हुए हैं। उन्होंने परियोजना स्थल पर ही अपना कार्यालय स्थापित कर लिया और अनेक तकनीकी दृष्टि से अपना योगदान दिया।

यह भी उल्लेखनीय है कि मंदिर निर्माण हेतु अधिकांश दान स्थानीय भक्तों ने ही जुटाया और इस कार्य के लिए विशेष टीम बनाने की आवश्यकता नहीं पड़ी। कई भक्तों के योगदान उनके वेतन से कई गुना अधिक था। कुछ भक्तों ने दान देने के लिए अपने आभूषण बेच

दिये, जबकि कुछ भक्तों ने ऋण लेकर दान दिया। कई बच्चे भगवान के इस सुंदर निवास के प्राकार्ण्य में योगदान देने के लिए अपनी गुल्फ़ों के लाये और बचत की सारी राशि दान दे दी। इसे आप विशुद्ध और निश्छल प्रेम ही कहेंगे न।

भक्त एक फोन मिलते ही दौड़ते हुए साइट पर पहुँच जाते थे। कुछ भक्त अपने कार्यालयों से छुट्टी लेकर योगदान देते और कुछ भक्त रातों जगकर निर्माणकार्य को पूरा करवाते। भक्तगण बिना किसी अपेक्षा के अपना सर्वस्व भगवान् की सेवा में न्यौछावर कर रहे थे और उत्कृष्टित हृदयों से भगवान् के प्रकट होने की प्रतीक्षा कर रहे थे।

परियोजना का समापन अपने आप में एक कठिन चरण था। मंदिर के प्रत्येक खण्ड पर अलग से ध्यान देने की आवश्यकता थी। गुम्बद, वेदी, विग्रहों की रसोई, मंदिर हॉल, संगमरमर की पॉलिश, पिछले हिस्से में बने भवन, आंतरिक सजावट आदि प्रत्येक खण्ड के लिए भक्तों की टीम थी।

भक्तों के इस प्रेम और प्रतिबद्धता के प्रतीक के रूप में, उनके नामों से अंकित इंटों को श्री श्रीराधा-गाविन्द और श्री श्रीसीता

राम लक्ष्मण हनुमान के चरणकमलों के नीचे रखा गया है।

चुनौतियाँ एवं विशेषताएँ

महान् परियोजनाएँ बड़ी चुनौतियों के साथ आती हैं। इस परियोजना की अपनी चुनौतियाँ थीं, जिनमें सबसे चुनौतीपूर्ण थीं - मंदिर हॉल का विस्तार, वेदी, बाहरी गुम्बद की संरचना और कोविड के कारण आयी आर्थिक मंदी।

जैसे-तैसे मूलभूत ढाँचे का निर्माण पूरा हुआ। इसके बाद सबसे बड़ी चुनौती थी मंदिर के विभिन्न खण्डों का सुन्दरीकरण करना। अब तक निर्माणकार्य को सम्भाल रही टीम ने स्वयं को इस सूक्ष्म कार्य के लिए अपर्याप्त एवं असहाय अनुभव किया। तब परम पूज्य गोपालकृष्ण गोस्वामी ने फरीदाबाद टीम को एक कला पारखी और प्रसिद्ध इस्कॉन बहादुरगढ़ मंदिर के डिजाइनर श्रीमान रासप्रिया दास से सहायता लेने के लिए कहा। और उनका हस्तक्षेप होते ही फरीदाबाद परियोजना में मानो चमत्कार हो गया। आज मंदिर जैसा दिखायी देता है, इसका श्रेय उनके कुशल एवं कलात्मक मार्गदर्शन को जाता है। निर्मल कला और



प. पू. गोपालकृष्ण
गोस्वामी से भेंट स्वीकार
करते हुए सुनील शर्मा
(महाराज की दायीं ओर)
एवं राजीव शर्मा (महाराज
की बायीं ओर)। चित्र में
सबसे बायीं ओर हैं श्रीमान्
गोपीश्वर दास।

भक्तगण उल्लासपूर्ण
कीर्तन करते हुए (दायें)
संगमरमर से बना मंदिर का
प्रवेश (नीचे)

महल-शैली में बने भवन ने सभी भक्तों, आगंतुकों और आसपास रहने वाले सभी निवासियों के हृदय जीत लिए।

प्रवेश द्वार से ही मंदिर की सुंदरता देखी जा सकती है। इस्कॉन 'लोगो' के साथ लोहे की बड़ी ग्रिल, मजबूत स्तंभ और राजसी द्वार सभी का स्वागत करते हैं।

यह मंदिर दिल्ली एनसीआर में मकराना संगमरमर से बना एकमात्र मंदिर है, जिसमें संगमरमर का सारा काम मकराना के श्रमिकों द्वारा किया गया है।

मंदिर के प्रवेशद्वार पर श्रीचैतन्य महाप्रभु के संकीर्तन आन्दोलन का भाव प्रतिबिंబित होता है। नृत्य-कीर्तन करते भक्तों के नक्षाशीदार संगमरमर के भित्ति चित्र विशेष रूप से जयपुर के शिल्पकारों द्वारा बनाये गये हैं। यह सुन्दर दृश्य प्रवेशद्वार पर भव्य नक्षाशीदार लकड़ी के दरवाजे के ऊपर सुशोभित है। चित्रण प्रवेश द्वार पर ही भक्ति की भावना को जागृत कर देता है।

मंदिर कक्ष में उदयपुर के राजस्थानी पारंपरिक टिकरी दर्पण काम से बना ऊँचा गुंबद सभी को सम्मोहित कर लेता है। गुंबद के नीचे की दीवारों को हाथ से बने चित्रों द्वारा सजाया गया है, जिन्हें वृन्दावन के प्रसिद्ध रूसी

कलाकार अंजना दास ने बनाया है। ये चित्र अत्यन्त अनोखे रूप से भगवान् की विभिन्न लीलाओं को दर्शाते हैं।

गर्भगृह 100 साल पुरानी बर्मा सागवान की लकड़ी से बनी है, जिसपर जोधपुर के कारीगरों ने अत्यन्त बारीक नक्षाशी की है। बारीक नक्षाशी किये गये गर्भगृह के दरवाजे भी उतने ही सुन्दर हैं। गर्भगृह के दोनों ओर लकड़ी के दो विशाल फ्रेम हैं, जिनमें सभी को आशीर्वाद देने के लिए भगवान् जगन्नाथ और भगवान् नरसिंह के जीवंत चित्र हैं। विग्रहों की मॉड्यूलर और विशाल एवं भव्य रसोई को जेनमोड किचन के समर्थन, परामर्श

और कार्यान्वयन द्वारा डिजाइन और स्थापित किया गया है।

भव्य उद्घाटन समारोह और अर्चा विग्रह की प्राण प्रतिष्ठा

श्री श्रीराधा गोविंद धाम की चिरप्रतीक्षित प्राणप्रतिष्ठा वर्ष 2021 विजया दशमी के अतिपावन अवसर पर 15 अक्टूबर को सम्पन्न हुई। यह 13 अक्टूबर से 17 अक्टूबर 5 दिनों का कार्यक्रम था। विग्रहों का स्वागत विभिन्न होम और यज्ञों, जैसे वास्तु शांति होम, कलश आराधना, वैष्णव होम, न्यासादि होम आदि के साथ किया गया। वातावरण





भेंटस्वरूप इस सम्पत्ति का दान इतिहास में अमर हो गया है और इस उदारता के लिए उन्हें सदैव श्रीभगवान् का आशीर्वाद प्राप्त होता रहेगा। यह परिवार सदैव इस्कॉन का समर्थन करने के लिए उत्सुक रहा है। यहाँ तक कि इस कार्यक्रम के आयोजन के लिए शर्मा परिवार के प्रतिष्ठित सैफरैन होटल की एक पूरी मंजिल को संन्यासियों तथा श्रील प्रभुपाद के शिष्यों के ठहरने के लिए आरक्षित रखा गया था।

भक्ति और आनन्द की भावना से भर गया था। विग्रहों की प्राणप्रतिष्ठा का यह कार्यक्रम इस्कॉन भारत के विग्रह मंत्री सेवातुल्य दास और उनकी टीम की देखरेख में सम्पन्न हुआ।

इस कार्यक्रम में परम पूज्य गोपाल कृष्ण गोस्वामी, परम पूज्य भानु स्वामी, परम पूज्य भक्ति भूंग गोविंद स्वामी, परम पूज्य भक्ति अनुग्रह जनार्दन स्वामी, परम पूज्य भक्ति रक्षक राधा गोलोकानन्द स्वामी और श्रील प्रभुपाद के वरिष्ठ शिष्यों श्रीमान् वैयासकि दास, श्रीमान् पंचगौड़ दास, श्रीमान् सर्वदृक दास, श्रीमान् श्रीधाम दास, श्रीमान् महामन दास इत्यादि सम्मिलित हुए।

विग्रहों का स्वागत वैदिक भजनों, यज्ञों और मधुर हरिनाम संकीर्तन के साथ किया गया, जिसमें भक्तों ने उत्साहपूर्वक नृत्य किया। श्रीविग्रहों के प्रथम दर्शन ने भक्तों के नेत्रों को नम कर दिया, जो दीर्घकाल से इस सुन्दर दृश्य की प्रतीक्षा कर रहे थे। विग्रहों के सुंदर शयन दर्शन ने भी भक्तों के हृदय को प्रफुल्लित किया।

सभी वरिष्ठ वैष्णवों ने विग्रहों के शुभ अभिषेक समारोह में भाग लिया और अन्य भक्त समारोह के दौरान कीर्तन करते हुए नृत्य कर रहे थे। उपर्युक्त वरिष्ठ वैष्णवों के साथ-

साथ श्रीमान् माधव दास, श्रीमान् श्रीनिकेत दास द्वारा किये गये मधुर कीर्तन ने फरीदाबाद को वृन्दावन में परिवर्तित कर दिया। अभिषेक समारोह के दौरान ही गुम्बद के शीर्ष पर सुन्दर स्वर्ण सुर्दर्शन चक्र स्थापित किया जा रहा था, जो दूर से मंदिर के अस्तित्व का सूचक है।

गोविन्दमादि पुरुष की प्रार्थना के साथ जैसे ही परदा गिरा, श्रीविग्रहों के प्रथम दर्शन करके उपस्थित प्रत्येक भक्त ने विशुद्ध प्रेम का आस्वादन किया। वातावरण दिव्य आनन्द से भर उठा और वह आनन्द वहाँ उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति की चेतना में सदा-सदा के लिए समा गया।

उद्घाटन समारोह के मुख्य अतिथि रहे स्थानीय सांसद और बिजली और भारी उद्योग राज्य मंत्री श्रीकृष्ण पाल गुर्जर। उन्होंने समाज के आध्यात्मिक उत्थान के लिए इस्कॉन और श्रील प्रभुपाद के अपार योगदान की सराहना की। परम पूज्य गोपाल कृष्ण गोस्वामी ने उन्हें श्रील प्रभुपाद की 125वीं वर्षगांठ पर प्रकाशित सिक्का भेंटस्वरूप दिया।

समारोह में श्रीसुनील शर्मा सपरिवार उपस्थित थे और उन्होंने नव-स्थापित विग्रहों की पहली आरती की। 2008 में इस्कॉन को

उद्घाटन समारोह के बाद दो दिवसीय हरिनाम संकीर्तन मेले का आयोजन किया गया, जिसमें विश्वभर के प्रतिष्ठित वैष्णवों ने अपने मधुर कीर्तन द्वारा श्री श्रीराधा गोविन्द के चरणकमलों की सेवा की और भक्तों को साक्षात् गोलोक वृन्दावन का एक अनुभव प्रदान किया।

इस्कॉन के संस्थापक आचार्य कृष्णकृपामूर्ति श्री श्रीमद् ए.सी.भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद की कृपा से श्री श्रीराधा गोविन्द धाम स्थानीय जनता को आशीर्वाद देने के लिए फरीदाबाद शहर में प्रकट हुआ है। श्रीभगवान् फरीदाबाद के निवासियों को भगवद्वर्णन कराने तथा उन्हें भगवद्वाम ले जाने के लिए स्वयं अवतरित हुए हैं।

शुभंगी वृदा देवी दासी प.पू.गोपालकृष्ण गोस्वामी की शिष्या हैं। उन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय से अर्थशास्त्र में स्नातक शिक्षा प्राप्त की है। वे डिजिटल प्रचार टीम की संस्थापिका एवं सक्रिय सदस्या हैं। वे इस्कॉन फरीदाबाद गर्ल्स फोरम ‘अनुभूति’ की भी एक सक्रिय सदस्या हैं और अपने परिवार के साथ मंदिर से जुड़ी विभिन्न सेवाओं में सहायता करती हैं।



एक पत्ता, फूल, फल और जल

भगवान् को प्रसन्न करने के लिए वस्तु तथा भक्तिभाव अधिक महत्वपूर्ण है।

- साक्षी गोपाल दास

भगवद्गीता के नौवें अध्याय श्लोक संख्या 26 में भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं-
पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहं भक्त्युपहृतश्नामि प्रयतात्मनः॥
भगवान् भक्ति से अर्पित की गई वस्तुओं को स्वीकारते हैं। यह अत्यन्त अद्भुत है।

क्योंकि भगवान् प्रत्येक वस्तु के स्वामी हैं और उन्हें किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं है।

कई बार हम देखते हैं कि कुछ योगी अपनी भूख को पूरी तरह वश में कर लेते हैं। श्रीचैतन्य महाप्रभु के शिष्य श्रील रघुनाथदास

गोस्वामी हर दूसरे दिन केवल अंजुली भर छाछ पीकर रहते थे और इस प्रकार वे एक सौ बीस वर्षों तक जीवित रहे।

यह सोचना भ्रम है कि हमें भोजन की आवश्यकता है क्योंकि वास्तव में हम आत्मा हैं। प्रायः व्यक्ति सोचता है “यदि मैं शराब

नहीं पीऊँगा तो मर जाऊँगा” या “यदि मैं सिगरेट नहीं पीऊँगा तो कल सुबह तक मर जाऊँगा।” यहाँ तककि चाय भी। कई बार लोग कहते हैं, “चाय के बिना मैं मर रहा हूँ।” किन्तु वास्तव में इन वस्तुओं के अभाव में हम नहीं मरेंगे।

तो हमें आहार भी इसलिए महत्वपूर्ण लगता है क्योंकि हम स्वयं को यह शरीर मानते हैं। हम यह नहीं कह रहे कि हमें भोजन की आवश्यकता नहीं हैन्दिःसन्देह रूप से शरीर को इसकी आवश्यकता हैकिन्तु मुक्ति का स्तर प्राप्त करने पर हम जानेंगे कि वास्तव में हमें किसी प्रकार के भोजन की आवश्यकता नहीं है। केवल शरीर को विकसित होने के लिए इसकी आवश्यकता है। उसके पश्चात् आश्चर्यजनक रूप से थोड़े से अन्न द्वारा भी शरीर का निर्वाह हो सकता है; कई लोगों ने ऐसा किया है।

हमारा ऐसा कहना विचित्र जान पड़ता होगा क्योंकि हरे कृष्ण मंदिरों के उत्सवों में कई बार भक्त आवश्यकता से अधिक प्रसाद खा लेते हैं। किन्तु सिद्धान्त यह है कि व्यक्ति ऐसी अवस्था पर पहुँच सकता है जहाँ वह बिना भोजन के जीवन जी सकता है। तो फिर भगवान् का तो कहना ही क्याहूँहै किसी भी प्रकार के भोजन की आवश्यकता नहीं है। वे स्वयं में पूर्ण सन्तुष्ट हैं किन्तु फिर भी वे हमारी भेंटों को स्वीकार कर खाते हैं।

प्रेम का बंधन

एक दृष्टि से भगवान् को भी इसकी ‘आवश्यकता’ है। क्यों? प्रेम के कारण। यह अत्यन्त महत्वपूर्ण है। प्रेम के कारण भेंट मधुर बन जाती है। यदि एक प्रेमी प्रेमपूर्वक अपनी प्रेमिका को अत्यन्त तुच्छ वस्तु भी देता है तो उसे भी वह अत्यन्त प्रसन्नता से स्वीकार करती है। क्यों? प्रेम के कारण।

एक दिन भगवान् कृष्ण अचानक बिदुर के घर गये। आनन्दित हो बिदुर की पत्नी ने श्रीकृष्ण को आसन दिया एवं उनके चरणों का अभिषेक किया। वह उन्हें खाने के लिए

कुछ केले देना चाहती थी। किन्तु प्रेम में भावविभोर होने के कारण वह केले को छील कर फेंक रही थी और छिलका श्रीकृष्ण को दे रही थी। और श्रीकृष्ण भी अपने भक्त के प्रेम में इतने भावविभोर हो गये कि वे छिलकों को ही खाने लगे।

इसका अर्थ यह नहीं कि हम भगवान् को छिलके अर्पित करें। नहीं। अपितु हम अकसर ऐसे शुद्ध प्रेममयी सम्बन्धों को नहीं समझ पाते जिसमें स्वार्थ का लेशमात्र भी अंश नहीं होता। एक भक्त केवल भगवान् को प्रसन्न करना चाहता है और भगवान् भी भक्त को प्रसन्न करने के अलावा कुछ नहीं सोचते।

और यह सब केवल एक अत्यन्त सरल विधि से आरम्भ होता हैकुछ अर्पित करना। हम कुछ भी भगवान् को अर्पित कर सकते हैं। पत्रं पुष्पं फलं तोयम् तुम प्रेमपूर्वक मुझे पत्ता, फूल, फल या थोड़ा जल अर्पित करो, मैं उसे स्वीकार करूँगा।” कोई भी व्यक्ति वृक्ष से पत्ता तोड़ सकता है या हरी सब्जी उगा सकता है। कहीं से भी एक फूल प्राप्त करना सरल है। आप एक महंगा गुलाब या साधारण सा जंगली फूल भी अर्पित कर सकते हो। नहीं तो जल तो कोई भी अर्पित कर सकता है। तो वास्तव में वस्तु नहीं अपितु उसमें निहित प्रेम महत्वपूर्ण है।

मान लीजिए आप एक पिता हैं। काम से घर आते समय आप अपने पुत्र के लिए कुछ मिठाई लाते हैं। घर पहुँचने पर आपका पुत्र अपने मुख में कल दी गई मिठाई को चूसता हुआ दौड़ा-दौड़ा आपके पास आता है और उसे मुँह से निकालता हुआ कहता है, “पिताजी, बहुत स्वादिष्ट है। आप भी लीजिए न?”

आप स्नेह से कितने भावविभोर हो जाओगे, क्योंकि वह आपके साथ प्रेम का आदान-प्रदान कर रहा है। आपके पास थैला भर मिठाइयाँ हैं। आप स्वयं उसे नहीं खाते और निश्चित् रूप से आप अपने पुत्र द्वारा चूसी जा रही मिठाई भी नहीं चाहते। किन्तु

उस समय कैसे आप स्वयं को रोक पाओगे? क्योंकि बच्चे अकसर स्वार्थी रहते हैं और जब माता-पिता देखते हैं कि बच्चे निस्वार्थ भावना से उन्हें कुछ देना चाहते हैं तो उन्हें अत्यधिक प्रसन्नता होती है।

उसी प्रकार भगवान् सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के पिता हैं और उन्हें कुछ भी अर्पित किये जाने पर वे स्नेहपूर्वक भावविभोर हो जाते हैं। तो हम भगवान् को प्रसन्न करना चाहते हैं। वैदिक ग्रंथ बताते हैं, यस्मिन् तुष्टे जगत् तुष्टम् तुष्ट ‘यदि आप भगवान् को तुष्ट करते हो तो किसी अन्य को तुष्ट करने की आवश्यकता नहीं रह जाती।’ वृक्ष की जड़ में जल सींचने से पत्तियाँ, फूलों, फलों इत्यादि को स्वतः ही जल प्राप्त हो जाता है। तो उसी प्रकार यदि आप संसार में किसी के लिए कुछ करना चाहते हो तो वह कार्य भगवान् के लिए करो और सबकुछ सही हो जायेगा। तो हम केवल भगवान् को अपनी भक्ति अर्पित करने का प्रयास करते हैं। भगवद्गीता से भगवद्गीता जागृत होता है जिसके कारण आप स्वभाविक रूप से प्रत्येक की सेवा करना चाहते हो।

भगवद्गीता का पुनः जागरण

भगवान् की प्रिय वस्तुओं को स्वीकार कर एवं अप्रिय वस्तुओं को अस्वीकार कर हम भगवद्गीता विकसित कर सकते हैं। एक कहावत है ‘यदि तुम मुझसे प्रेम करते हो तो मेरे कुते से भी तुम्हें प्रेम करना होगा।’ जब हम किसी व्यक्ति से प्रेम करते हैं तो स्वभाविक रूप से हम वे कार्य भी करने लगते हैं जो हमारे प्रेमी को प्रिय हैं, चाहे वे हमें अच्छे न लगते हों।

आध्यात्मिक जीवन स्वीकारने पर हमारी विचारशैली बदलने लगती है। हम सोचने लगते हैं कि भगवान् को क्या अच्छा लगता है। हम अपने अंदर के व्यक्ति का हनन नहीं करते अपितु हम समर्पित हो जाते हैं। आपको टी.वी. देखना अच्छा लगता होगा किन्तु आपके प्रेमी को वह अच्छा नहीं लगता तो आप भी टी.वी. न देखने का निर्णय करते हो।

यद्यपि आपमें वह इच्छा बनी रहती है किन्तु प्रेमवश आप अपनी जीवनशैली को उसी प्रकार ढाल लेते हो। इस प्रकार कृष्णभावना का अभ्यास कर हम धीरे-धीरे प्रेम को विकसित कर सकते हैं।

उदाहरणार्थ, एक बालक में जन्मजात चलने की क्षमता रहती है लेकिन फिर भी उसे अभ्यास की आवश्यकता है। सबसे पहले वह किसी वस्तु को पकड़कर खड़े होने का प्रयास करता है, फिर एक दिन वह अपना पहला कदम उठाता है। सभी बच्चे इसी प्रक्रिया से चलना सीखते हैं। धीरे-धीरे चलना उसके लिए एक स्वभाविक क्रिया हो जाती है और यह करने के लिए उसे सोचना नहीं पड़ता। एक कार चलाना सीखने की भी यही प्रक्रिया है। पहले अभ्यास करना पड़ता है और कुछ समय पश्चात् कार चलाना आपका दूसरा स्वभाव बन जाता है। इसी प्रकार भगवद्प्रेम हम सभी में विद्यमान हैहनित्य सिद्ध कृष्णप्रेम साध्य कभु नय। श्रवणादि शुद्ध चित्त करय उदय। ह्वाँ और कृष्णनाम के श्रवण-कीर्तन द्वारा चेतना शुद्ध होने पर हममें भगवान् की सेवा करने की इच्छा जागृत होती है और कुछ समय पश्चात् वह हमारा स्वभाव बन जाता है।

कृष्णभावनामृत आन्दोलन में हम कृष्णप्रेम को जागृत करने के लिए साधना करते हैं। उदाहरणार्थ, भगवान् को भोग अर्पित करना। जब हम भोग बनाते हैं तब हम यह विचार नहीं करते कि यह मैं अपने या अपने पति/पत्नी या बच्चों के आनन्द के लिए है बना रही/ रहा हूँ। अपितु हम उसे भगवान् के आनन्द हेतु बनाते हैं। और यह अत्यन्त आश्चर्यजनक बात है कि हमारे मंदिरों में आकर प्रसाद लेने वाले लोग उसे प्राप्त कर अत्यन्त आनन्द और सन्तुष्टि का अनुभव करते हैं। लोग कहते हैं, “मैंने पूरे जीवन में कभी भी इससे स्वादिष्ट व्यंजन का आस्वादन नहीं किया है।”

श्रीकृष्ण को भोग अर्पित करने से प्रत्येक जीवहप्रसाद खाने वाले व्यक्ति से लेकर अर्पित किये फल और सब्जी तकहसभी को लाभ

प्राप्त होता है। यह सुनने में अत्यन्त विचित्र लगता होगा। किन्तु मान लीजिए यदि आप एक वृक्ष से सेब तोड़कर भगवान् को अर्पित करते हैं तो भगवान् उस फल को वृक्ष की ओर से एक भेंट के रूप में स्वीकार करते हैं। आध्यात्मिक दृष्टि से वृक्ष एक जीव है, तो फल अर्पित किये जाने पर श्रीकृष्ण उसे उस जीवात्मा (वृक्ष) द्वारा एक भेंट के रूप में स्वीकार करते हैं। इस प्रकार उस वृक्ष को भी लाभ होता है।

प्रसाद की महिमा

दिखने में भगवान् को अर्पित किया गया फल एक साधारण-सा फल प्रतीत होगा किन्तु उसे खाने वाले पर इसका विशेष प्रभाव होता है। श्रीकृष्ण को अर्पित किया गया भोजन उसी प्रकार आध्यात्मीकृत हो जाता है जैसे एक लोहे की छड़ को अग्नि में डालने से उसमें अग्नि के गुण आ जाते हैं। लोहे की गरम छड़ साधारण दिखाई देती है किन्तु स्पर्श करने पर वह किसी वस्तु को जला सकती है। इसी प्रकार साधारण दिखने वाले भगवद्प्रसाद का सेवन करने से व्यक्ति शुद्ध एवं आध्यात्मीकृत हो जाता है।

क्योंकि भगवान् आध्यात्मिक हैं इसलिए उनसे आने वाली सभी वस्तुएँ भी आध्यात्मिक हैं, किन्तु अभी वे केवल एक भौतिक आवरण से ढकी हुई हैं। किसी वस्तु को पुनः भगवान् को अर्पित करने से वह आवरण हट जाता है और उस वस्तु की मूल आध्यात्मिक क्षमता प्रकट हो जाती है।

छोटे से दिखने वाले अणु में भी असीमित मात्रा में शक्ति छोड़ने की क्षमता होती है। सामान्य बुद्धि द्वारा इसे समझना अत्यन्त कठिन है किन्तु वैज्ञानिक अनुसंधानों द्वारा यह सिद्ध हो चुका है। उसी प्रकार यह समझना अत्यन्त कठिन है कि बाह्य रूप से साधारण भोजन दिखने वाला प्रसाद कैसे किसी की चेतना परिवर्तित कर सकता है।

प्रत्येक वस्तु मूल रूप से आध्यात्मिक है और भगवान् से अलग होते ही वह भौतिक

बन जाती है। दूसरे शब्दों में यह व्यक्ति की चेतना पर निर्भर है। जब हम किसी वस्तु को अपने सम्बन्ध में देखते हैं तो वह भौतिक बन जाती है, क्योंकि हम सीमित हैं। आध्यात्मिक दृष्टि से भी हम सीमित हैं। जीव अणु है और भगवान् विभु हैं। वैदिक शास्त्रों में वर्णन है कि सभी जीवहमनुष्य, वृक्ष, कीट इत्यादिद्विभगवान् के तुच्छ अंश हैं और जब वह भगवान् से जुड़ जाता है तो वह अपनी मूल शक्ति एवं क्षमता को प्राप्त करता है। किन्तु भगवान् से अलग होने पर यह अंश सीमित हो जाता है। एक चिंगारी विशाल अग्नि का हिस्सा होती है किन्तु अग्नि से अलग होते ही वह नष्ट हो जाती है। पुनः अग्नि में डालने पर उस चिंगारी में अपने मूल प्रकाश और ऊष्मा को प्राप्त करने की समर्थता होती है किन्तु अग्नि से पृथक् वह गुणरहित हो जाती है। उसी प्रकार असीमित आध्यात्मिक शक्ति होने पर भी एक वृक्ष के शरीर में जीव की आध्यात्मिक समर्थता स्थगित रहती है और एक पूर्ण चेतन जीव निर्जीव बन जाता है।

कृष्णभावना आध्यात्मिक चेतना को पुनर्जागृत करने हेतु एक व्यवहारिक पद्धति है। एक कहावत है, ‘जैसा अन्न वैसा मन’। यदि आप श्रीकृष्ण को अर्पित आध्यात्मीकृत भोजन ग्रहण करोगे तो धीरे-धीरे आपका शरीर भी आध्यात्मीकृत हो जायेगा और आप भगवान् को सरलता से समझ पाओगे। भगवान् को जानना तो दूर लोग यह भी नहीं जानते कि वे आत्मा हैं। जो व्यक्ति प्रतिदिन माँसभक्षण करता है उसके लिए आत्मा और जड़पदार्थ का भेद समझना कठिन हो जाता है। कोई भी व्यक्ति कह सकता है कि मैं भगवान् से प्रेम करता हूँ या भगवान् को जानता हूँ किन्तु मूल रूप से भगवान् को समझना अलग बात है। आध्यात्मिक विषयों को समझने के लिए आध्यात्मिक बुद्धि की आवश्यकता है। इसलिए भगवान् को अर्पित किया गया भोजन आध्यात्मिक जीवन का महत्वपूर्ण अंग है।

श्रीभगवान् ने कहा

(भगवद्गीता कथारूप)

भाग - 244

- जिताभिन्न दास



**सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः ॥**
अर्थात् ‘वास्तविक योगी समस्त जीवों में
मुझको तथा मुझमें समस्त जीवों को देखता
है। निस्सन्देह स्वरूपसिद्ध व्यक्ति मुझ परमेश्वर
को सर्वत्र देखता है।’ (भगवद्गीता 6.29)

पिछले श्लोक से सम्बन्ध

पिछले श्लोक में श्रीकृष्ण ने कहा था कि योगी को श्रीकृष्ण के स्पर्श की अनुभूति में अत्यन्त सुख की प्राप्ति होती है। उस समय अर्जुन के मन में प्रश्न उठा कि यदि योगी को श्रीकृष्ण के स्पर्श की अनुभूति होती है तो योगी श्रीकृष्ण का दर्शन भी तो करता होगा! अब योगी यदि श्रीकृष्ण का दर्शन करता है तो वह किस प्रकार दर्शन करता है? अन्तर्यामी होने के कारण श्रीकृष्ण अर्जुन के मन के प्रश्न को समझ गये, अतः उन्होंने इस श्लोक में बताया है कि वह योगी श्रीकृष्ण का दर्शन सर्वत्र करता है। इस श्लोक में श्रीकृष्ण की चार अत्यन्त महत्वपूर्ण शिक्षाएँ हैं, जिनकी हम क्रमपूर्वक चर्चा करेंगे।

1. योगी सभी जीवों में स्थित

परमात्मा के दर्शन करता है
श्लोक के प्रारम्भिक शब्द हैं- सर्व-

भगवान् श्रीकृष्ण बताते हैं कि योग का
चरम लक्ष्य उनका विन्दन करना है।

भूत-स्थम्-आत्मानम्। अर्थात् योगी समस्त जीवों में स्थित श्रीकृष्ण को देखता है। इस श्लोक के तात्पर्य में श्रील प्रभुपाद लिखते हैं- ‘कृष्णभावनाभवित योगी पूर्ण द्रष्टा होता है, क्योंकि वह परब्रह्म श्रीकृष्ण को हर प्राणी के हृदय में परमात्मा के रूप में स्थित देखता है। ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति। अपने परमात्मा रूप में भगवान् एक कुत्ते तथा एक ब्राह्मण, दोनों के हृदय में स्थित होते हैं। पूर्ण योगी जानता है कि भगवान् नित्यरूप में दिव्य हैं और कुत्ते या ब्राह्मण में स्थित होने से भी भौतिकरूप से प्रभावित नहीं होते हैं। यही भगवान् की परम दिव्यता है। यद्यपि जीवात्मा भी एक-एक हृदय में विद्यमान है, किन्तु वह एक साथ समस्त हृदयों में सर्वव्यापी नहीं है। आत्मा तथा परमात्मा का यही अन्तर है। जो वास्तविक रूप से योगाभ्यास करने वाला नहीं है, वह इसे स्पष्टरूप में नहीं देख सकता है। कृष्णभावनाभवित व्यक्ति श्रीकृष्ण को आस्तिक तथा नास्तिक, दोनों में देख सकता है। स्मृति में इसकी पुष्टि इस प्रकार हुयी है- ‘भगवान् सभी प्राणियों का स्रोत होने के कारण माता तथा पालन कर्ता के समान हैं। जिस प्रकार माता अपने समस्त पुत्रों के प्रति समभाव रखती है, उसी प्रकार परम पिता (या माता) भी सभी प्राणियों के प्रति

समभाव रखता है। फलस्वरूप परमात्मा प्रत्येक जीव में निवास करता है।’

इस सम्बन्ध में योगपथ नामक पुस्तक में श्रील प्रभुपाद लिखते हैं- ‘वास्तविक योगी श्रीकृष्ण को समस्त जीवों में देखता है। यह कैसे सम्भव है? कुछ लोग कहते हैं कि सारे जीव श्रीकृष्ण हैं, अतएव श्रीकृष्ण की पृथक् से पूजा करने की जरूरत नहीं है। फलस्वरूप ऐसे लोग मानव कल्याण-कार्य अपना लेते हैं, और यह दावा करते हैं कि यह कार्य

अधिक श्रेष्ठ है। वे कहते हैं- ‘श्रीकृष्ण की पूजा क्यों की जाये? श्रीकृष्ण तो यह कहते हैं कि श्रीकृष्ण को हर वस्तु में देखा जाये। अतएव हम दरिद्र नारायण की अर्थात् सड़क के भिखारियों की सेवा करें।’ ऐसी गलत व्याख्या करने वाले लोग सही विधि को नहीं जानते हैं। सही विधि को प्रामाणिक गुरु के अधीन होकर ही सीखा जा सकता है।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि असली योगी तो श्रीकृष्ण का भक्त होता है और सबसे बढ़ा-चढ़ा भक्त आगे बढ़ कर कृष्णभावनामृत का प्रचार करता है। ऐसा क्यों? क्योंकि वह समस्त जीवों में श्रीकृष्ण का दर्शन करता है। सो कैसे? क्योंकि वह देखता है कि सारे जीव श्रीकृष्ण के भिन्नांश

हैं। वह यह भी समझता है कि चूँकि इन लोगों ने श्रीकृष्ण को भुला दिया है, इसलिये उसका कर्तव्य है कि इन लोगों को कृष्णभावनामृत के प्रति जागरूक बनाये। कभी-कभी धर्म प्रचारक लोग आदिवासी अशिक्षित लोगों को शिक्षित बनाने के लिये आगे आते हैं, क्योंकि वे देखते हैं कि ये मनुष्य हैं, अतः जीवन का मूल्य समझने के लिये इन्हें शिक्षित किये जाने की आवश्यकता है। यह धर्म प्रचारक का दया भाव है। इसी प्रकार भक्त प्रेरित होता है। वह यह समझता है कि प्रत्येक व्यक्ति को यह जान लेना चाहिये कि वह श्रीकृष्ण का भिन्नांश है। भक्त यह समझता है कि लोग श्रीकृष्ण का

च आत्मनि। अर्थात् योगी सभी जीवों को श्रीकृष्ण में स्थित देखता है। इस श्लोक के तात्पर्य में श्रील प्रभुपाद लिखते हैं- ‘बाह्यरूप से भी प्रत्येक जीव भगवान् की शक्ति में स्थित है। जैसा कि सातवें अध्याय में बताया जायेगा कि भगवान् की दो मुख्य शक्तियाँ हैं- परा तथा अपरा। जीव परा शक्ति का अंश होते हुये भी अपरा शक्ति से बद्ध है। जीव सदा ही भगवान् की शक्ति में स्थित है। प्रत्येक जीव किसी न किसी प्रकार भगवान् में ही स्थित रहता है।’ इस सम्बन्ध में योगपथ नामक पुस्तक में श्रील प्रभुपाद लिखते हैं- ‘... ऐसा इसलिए सम्भव है, क्योंकि असली योगी जानता है कि हम

स्थित हैं, क्योंकि श्रीकृष्ण की शक्ति श्रीकृष्ण से भिन्न नहीं है। इस प्रकार भौतिक शक्ति श्रीकृष्ण हैं। यद्यपि हम सोचते हैं कि हम इस फर्श पर बैठे हैं, किन्तु वास्तव में हम श्रीकृष्ण पर बैठे हैं।’

सभी जीवों के आधार श्रीकृष्ण हैं

- यहाँ पर श्रीकृष्ण कह रहे हैं कि योगी सभी जीवों को श्रीकृष्ण में देखता है। इसका अर्थ यह भी है कि सभी जीवों का जीवन श्रीकृष्ण पर ही आधारित है। गीता (7.8) में श्रीकृष्ण कहते हैं कि श्रीकृष्ण ही जल का स्वाद हैं, वे ही सूर्य तथा चन्द्रमा में प्रकाश हैं। अब यदि हम विचार करें तो समझ सकते हैं कि जल सारे जीव पीते हैं। पक्षिओं, पशुओं तथा मनुष्यों को जल की आवश्यकता पड़ती है। जल न केवल पीने के लिये इस्तेमाल होता है, अपितु कपड़ा धोने तथा पौधों को सींचने के लिये भी। युद्धभूमि में सैनिक जल के महत्व को समझ सकता है। युद्ध करते समय सैनिक प्यासे होते हैं और यदि उन्हें जल नहीं मिलता तो वे मर जाते हैं। एक बार गीता का सिद्धान्त सीख लेने पर मनुष्य जब भी जल पीता है तो वह श्रीकृष्ण पर अपना जीवन आधारित देखता है। सभी लोग जल में स्थित हैं, अर्थात् सभी लोग श्रीकृष्ण में ही स्थित हैं। ऐसा कौन सा दिन बीता होगा, जिस दिन हम जल नहीं पीते हैं? श्रीकृष्ण सूर्य तथा चन्द्रमा का प्रकाश हैं। अतः चाहे दिन हो या रात, हम या तो सूर्य का प्रकाश या चन्द्रमा का प्रकाश देखते हैं। इस प्रकार हमारा जीवन सूर्य तथा चन्द्रमा पर आधारित है, अर्थात् श्रीकृष्ण पर आधारित है।

3. योगयुक्त आत्मा इसी प्रकार देखता है

श्लोक की दूसरी पंक्ति के शब्द हैं- ईक्षते योग-युक्त-आत्मा। अर्थात् योग-युक्त व्यक्ति इसी प्रकार देखता है। इसका अर्थ है कि जब तक व्यक्ति की दृष्टि इस प्रकार की नहीं होती है, तब तक वह योगयुक्त नहीं है।

जो व्यक्ति श्रीकृष्ण को सभी जीवों के अन्दर देखता है तथा श्रीकृष्ण को ही सभी जीवों का आधार देखता है, वह योग युक्त है।

विस्मरण कर देने के कारण कष्ट पा रहे हैं। इस तरह भक्त प्रत्येक जीव में श्रीकृष्ण का दर्शन करता है। वह इस विचार से मोहित नहीं होता कि प्रत्येक जीव श्रीकृष्ण बन गया है। बल्कि वह हर जीव को ईश्वर के पुत्र के रूप में देखता है। यदि मैं यह कहूँ कि यह बालक अमुक व्यक्ति का पुत्र है तो क्या मेरे कहने का अर्थ यह है कि यह बालक स्वयं अमुक व्यक्ति है? भले ही इस बालक में मैं उस व्यक्ति का दर्शन करूँ, क्योंकि यह उसका पुत्र है, किन्तु अन्तर तो रहता ही है। यदि मैं हर जीव को श्रीकृष्ण के पुत्र के रूप में देखूँ तो हर वस्तु में मुझे श्रीकृष्ण ही दिखेंगे। इसे समझना कठिन नहीं है।’

2. योगी सभी जीवों को परमात्मा में स्थित देखता है
श्लोक के अगले शब्द हैं- सर्व-भूतानि

जिस भी वस्तु को देखते हैं, वह श्रीकृष्ण हैं। हम इस फर्श पर या कालीन पर बैठे हैं, किन्तु वास्तव में हम श्रीकृष्ण पर बैठे हैं। इसे हमें तथ्य के रूप में मान लेना चाहिये। यह कालीन किस तरह श्रीकृष्ण हैं? यह श्रीकृष्ण हैं, क्योंकि यह श्रीकृष्ण की शक्ति से बनी है। परमेश्वर की अनेक शक्तियाँ हैं, जिनमें से तीन मुख्य हैं- भौतिक शक्ति, आध्यात्मिक शक्ति तथा तटस्था शक्ति। हम सभी जीवात्माएँ तटस्था शक्ति हैं, भौतिक जगत् भौतिक शक्ति है और आध्यात्मिक जगत् आध्यात्मिक शक्ति है। हम तटस्था शक्ति इसलिए हैं, क्योंकि हम या तो आध्यात्मिक शक्ति में अथवा भौतिक शक्ति में रह सकते हैं। कोई तीसरा विकल्प नहीं है। या तो हम भौतिकतावादी बन सकते हैं या अध्यात्मवादी। जब तक हम भौतिक जगत् में हैं, तब तक हम भौतिक शक्ति के ऊपर आसीन रहते हैं, इसलिये श्रीकृष्ण पर

यदि व्यक्ति को योग सिद्धियाँ प्राप्त हो जायें, परन्तु उसे इस प्रकार की दृष्टि नहीं प्राप्त हुई है तो उसे योग-युक्त नहीं कहा जायेगा। कई योगियों को योगसिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं, परन्तु वे उन योगसिद्धियों का प्रयोग या तो यह दिखाने के लिये करते हैं कि वे भगवान् बन गये हैं अथवा वे योगसिद्धियों का प्रयोग श्रीकृष्ण के विरुद्ध करते हैं। इस प्रकार योगसिद्धियाँ योगी के लिये सहायक न होकर बाधक बन जाती हैं। यहाँ पर श्रीकृष्ण यह नहीं कहते हैं कि जो व्यक्ति पानी के ऊपर चल सकता है, वह योगयुक्त है, अथवा जो व्यक्ति अपने मुख से आग निकालता है, वह योगयुक्त है। यहाँ पर श्रीकृष्ण कह रहे हैं कि जो व्यक्ति श्रीकृष्ण को सभी जीवों के अन्दर देखता है तथा श्रीकृष्ण को ही सभी जीवों का आधार देखता है, वह योग युक्त है।

भक्तगण योगसिद्धियों का प्रयोग

श्रीकृष्ण की सेवा में करते हैं - अभी यह बात बतायी गयी कि अभक्तगण योगसिद्धियों का प्रयोग श्रीकृष्ण के विरुद्ध करते हैं, परन्तु दूसरी बात भी समझने की है कि भक्तगण अपनी योगसिद्धियों का प्रयोग श्रीकृष्ण की सेवा में करते हैं। हनुमानजी ने अणिमा सिद्धि के द्वारा अपना रूप छोटा कर लिया तथा इस प्रकार वे लंका में सीताजी को खोजते रहे, परन्तु उन्हें कोई नहीं देख सका। इस प्रकार हमें समझना चाहिये कि योगयुक्त व्यक्ति के पास यदि योगसिद्धियाँ आती हैं, तो वह उन्हें या तो श्रीकृष्ण की सेवा में लगाता है, अथवा वह उन्हें स्वीकार नहीं करता है।

4. इस प्रकार उसकी दृष्टि सर्वत्र समान होती है

श्लोक के अन्तिम शब्द हैं- सर्वत्र सम-

दर्शनः। अर्थात् वह योगी सर्वत्र समान दृष्टि वाला होता है। इस श्लोक के तात्पर्य में श्रील प्रभुपाद लिखते हैं- ‘योगी समदर्शी होता है, क्योंकि वह देखता है कि समस्त जीव अपने-अपने कर्मफल के अनुसार विभिन्न स्थितियों में रहकर भगवान् के दास होते हैं। अपरा शक्ति में जीव भौतिक इन्द्रियों का दास रहता है, जबकि परा शक्ति में वह साक्षात् परमेश्वर का दास रहता है। प्रत्येक अवस्था में जीव ईश्वर का दास है। कृष्णभावनाभावित व्यक्ति में यह समदृष्टि पूर्ण होती है।’

योगी सर्वत्र समदर्शी होता है - यहाँ पर श्रीकृष्ण कह रहे हैं कि योगी सर्वत्र समदर्शी होता है। इसका अर्थ है कि यदि योगी के परिवार के लोग श्रीकृष्ण की भक्ति को स्वीकार नहीं करते हैं, तो वह उनका त्याग कर देता है तथा यदि अत्यन्त पतित व्यक्ति भी श्रीकृष्ण की भक्ति को स्वीकार करता है, तो वह उसे अपना लेता है। श्रील प्रभुपाद ने अपनी पत्नी तथा बच्चों का त्याग कर दिया, क्योंकि उन्होंने श्रीकृष्ण की भक्ति को स्वीकार नहीं किया तथा सड़कों में पड़े हुये अशुद्ध हिप्पियों को भी स्वीकार कर लिया, क्योंकि उन्होंने श्रीकृष्ण की भक्ति को स्वीकार किया।

इस श्लोक के बंगाली पद्धानुवाद में श्रील प्रभुपाद लिखते हैं-

सर्वत्र समान दृष्टि योगयुक्त आत्मा।

समाधिस्थ सेइ योगी देखे परमात्मा॥

अर्थात् योगयुक्त व्यक्ति श्रीकृष्ण के सम्बन्ध में प्रत्येक जीव को देखता है कि प्रत्येक जीव श्रीकृष्ण का नित्य दास है। तो यहाँ पर श्रीकृष्ण अर्जुन से कह रहे हैं कि हे अर्जुन! यदि तुम सर्वत्र समदर्शी बनना चाहते हो अर्थात् यदि तुम सर्वत्र मेरा ही नियन्त्रण देखना चाहते हो, तो मेरी आज्ञा से युद्ध करो।

हरे कृष्ण!

वैष्णव दिनदर्शिका

1 अप्रैल से 10 मई 2022 तक

अप्रैल 2022

बुधवार 6, श्रीपाद रामानुजाचार्य आविर्भाव।
रविवार 10, रामनवमीद्वंभगवान् श्रीरामचंद्र आविर्भाव, दोपहर तक उपवास।
बुधवार 13, कामदा एकादशी, दमनक रोपण द्वादशी।
गुरुवार 14, पारण समय 5:57-10:13
शुक्रवार 15, शालग्राम-तुलसी जलदान आरम्भ
शनिवार 16, श्रीबलराम रासयात्रा, श्रीकृष्ण वसंत रास, श्रीवंशीवदन ठाकुर आविर्भाव, श्रीश्यामानंद प्रभु आविर्भाव।
शनिवार 23, श्रीअभिराम ठाकुर तिरोभाव।
सोमवार 25, श्रील वृद्धावनदास ठाकुर

उपर्युक्त दिनदर्शिका नई दिल्ली के पंचांग अनुसार है,
अपने क्षेत्र की तिथियों के लिए निकटतम इस्कॉन मंदिर से सम्पर्क करें।

तिरोभाव।

मंगलवार 26, वरुथिनी एकादशी।

बुधवार 27, पारण समय 06:44-10:07

शनिवार 30, श्रील गदाधर पण्डित आविर्भाव।

मई 2022

मंगलवार 3, अक्षय तृतीया, 21 दिनों तक चलने वाली चंदन यात्रा आरम्भ।

शुक्रवार 6, श्रीपाद शंकराचार्य आविर्भाव।

रविवार 8, जाह्नु सप्तमी।

मंगलवार 10, श्रीमती सीतादेवी आविर्भाव, श्रील मधु पण्डित तिरोभाव, श्रीमती जाह्नवा देवी आविर्भाव।

अपने-पराये से परे

द्वन्द्व इस भौतिक संसार का अभिन्न अंग है। यह सर्वव्यापी है। यह प्रत्येक व्यक्ति के सूक्ष्म मन से लेकर समूचे विश्व में व्याप्त है। मन में उठने वाले द्वन्द्व हमें अनिर्णित तथा भ्रमित छोड़ देते हैं, जबकि मनुष्यों, समुदायों, सम्बन्धों, राष्ट्रों के आदि के बीच उठने वाले द्वन्द्व अहंकारभरी कलह को जन्म देता है।

द्वन्द्व का सीधा अर्थ है ‘दो-दो होना।’ जब दो पहलवान कुश्ती के अखाड़े में उतरते हैं तो उनके बीच होने वाली स्पर्धा को द्वन्द्व कहा जाता है, द्वन्द्युद्ध। दोनों पहलवान विभिन्न पैंतरों का प्रयोग करते हुए अपने स्पर्धी पर हावी होने का प्रयास करते हैं और अन्ततः अधिक शक्तिशाली पहलवान विजयी होता है।

प्रत्येक व्यक्ति का मन भी एक अखाड़ा है, और उसमें उठने वाले विरोधाभासी विचार पहलवानों की तरह निरन्तर युद्ध करते रहते हैं। हममें से अधिकांश लोगों को इसका अनुभव होगा। हम भ्रमित और अनिर्णित रहते हैं - “क्या करूँ? यह करूँ या वह करूँ? मेरे लिए क्या सही है और क्या गलत?” इत्यादि। वस्तुतः हमारे मन में उठने वाले ये विचार या तो धर्म के पक्ष में होते हैं अथवा अर्धमार्ग के पक्ष में। और द्वन्द्व इसलिए भी उठता है क्योंकि अक्सर धर्म का मार्ग सही तो होता है किन्तु सरल नहीं होता, जबकि अर्धमार्ग का मार्ग सरल-सुखद तो होता है किन्तु अक्सर सही नहीं होता।

हमारा मन का एक पहलवान सहज ही सरल-सुखद मार्ग पर चलना चाहता है, किन्तु दूसरा पहलवान यह जानते हुए कि यह सही नहीं है, उसका विरोध करता है। अथवा हमार दूसरा पहलवान सही मार्ग पर चलना चाहता है, तो पहला पहलवान विरोध करने लगता है। परिणाम होता है द्वन्द्व। इसमें विजय किसकी होगी, यह निर्भर करता है कि हम अपने दैनिक विचारों, अपने कार्यों, अपने संग, अपनी इच्छाओं आदि द्वारा कौन-से पहलवान को खिला-पिलाकर हटा-कटा बना रहे हैं।

यदि हम धर्म रूपी पहलवान को हष्ट-पुष्ट कर रहे हैं तो विकट परिस्थितियों में भी हम अर्धमार्ग के मार्ग पर नहीं चलेंगे। पाण्डवों का उदाहरण लें। वे धर्मपरायण थे, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं कि उन्होंने इन द्वन्द्वों का अनुभव नहीं किया। ऐसे अनेक प्रसंग रहे जब उन्होंने इन द्वन्द्वों में स्वयं को भ्रमित पाया, किन्तु चूँकि उन्होंने सदैव अपने धर्म रूपी पहलवान का पोषण किया था, अन्ततः वह विजयी रहा।

दूसरी ओर कौरव थे। चाहे महाराज धृतराष्ट्र हों अथवा उनका पुत्र

दुर्योधन, अपने अन्तःकरण में वे जानते थे कि क्या उचित है और क्या अनुचित, क्या धर्म है और क्या अर्धर्म। किन्तु जब-जब उनके मनों में यह द्वन्द्व उठा, विजय सदैव अर्धर्म का पक्ष लेने वाले पहलवान की हुई। क्यों? क्योंकि वे अपने विचारों, कार्यों, संग आदि द्वारा उसी को हष्ट-पुष्ट बनाते रहते थे।

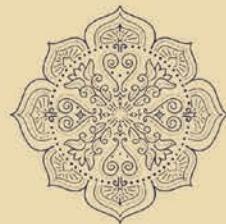
गीता में भगवान् श्रीकृष्ण इस द्वन्द्व के स्रोत का वर्णन करते हैं। वह है इच्छा तथा द्वेष (गीता 7.27)। हम इस संसार की किसी भी वस्तु के निर्माता, नियंत्रक अथवा स्वामी नहीं हैं। तिसपर भी जब हम उनका भोग करने की इच्छा करते हैं तो वह इच्छा दूसरों के प्रति द्वेष को जन्म देती है। हम अपने समान भोग की इच्छा रखने वाले लोगों को अपना स्पर्धी मानकर उनसे द्वेष करने लगते हैं। परिणाम होता है द्वन्द्व, कलह, युद्ध। हम बुरी तरह सम्मोहित हो जाते हैं। हम अपने शरीर को तथा शरीर से जुड़ी वस्तुओं को ‘अपना’ मान बैठते हैं और अन्य सबको ‘पराया’। यही द्वन्द्व है।

इस द्वन्द्व से मुक्त होने का एक यही मार्ग है कि हम इस सृष्टि की प्रत्येक वस्तु में ‘अपनापन’ देखने लगें। जैसे ही हम समझ जायेंगे कि इस संसार की प्रत्येक वस्तु का मुझसे प्रत्यक्ष-परोक्ष सम्बन्ध है, कुछ भी पराया नहीं रहेगा और द्वन्द्व समाप्त हो जायेगा। और यह कृष्णभावना का स्तर है। सम्पूर्ण सृष्टि का प्रत्येक कण श्रीकृष्ण की सम्पत्ति है और केवल उनके आनन्द निमित्त है। श्रीकृष्ण अथवा उनकी सम्पत्ति को भोगने की इच्छा द्वेष को जन्म देती है, तथा श्रीकृष्ण द्वारा भोगे जाने की इच्छा प्रेम को जन्म देती है।

इस अवस्था को निरन्तर कृष्णकथा के श्रवण द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। श्रीमद्भागवत (10.47.18) में वर्णन किया गया है- “श्रीकृष्ण की नित्य लीलाओं का श्रवण कानों के लिए अमृततुल्य है। जो व्यक्ति इस अमृत की एक बूँद का एक बार भी आस्वादन कर लेता है, उसका भौतिक द्वन्द्व नष्ट हो जाता है।”

भले ही हमारे मन के अखाड़े में उठने वाले द्वन्द्व हों अथवा बाह्य जगत् के अखाड़े में, जितना अधिक हम श्रीकृष्ण, उनकी प्रकृति, उनकी विभिन्न संतानों, उनके नियमों आदि को भोगने के स्थान पर उनकी सेवा का प्रयास करेंगे, उतना शीघ्र हम सृष्टि की प्रत्येक वस्तु में एकत्व का अनुभव करते हुए द्वन्द्वों में विजयी रहेंगे।

- वंशी विहारी दास



MANHAR
Vrindavan
Since 1858

bluecow
vrindavan

Serving Krishna

**Open for
FRANCHISE**

Start your own business

Contact us:

www.bluecow.co.in



+91 9068811231



Product Categories

Bluecow sells products and services related to preaching, meditation, reading, japas, yagyas and prasadam

- T-shirts - Religious
- Scarfs
- Perfumes and attar
- Bags
- Stationary
- Combo Pooja Pack



Bluecow's moto is to connect everyone to Krishna, and bring Krishna consciousness in our day to day lifestyle.



"In the journey of spreading Krishna consciousness be our
'Sakha'

R.N.I No. 43904/87. Postal Regn. No. MCN/01/2021 - 2023
Posted at Mumbai Patrika Channel Sorting Office,
Mumbai 400 001 on 1st & 2nd of every month.
भागवदर्थन अप्रैल २०२२

Date of publication on 27th of
every previous month.

अद्वितीय कारीगरी के नमूने

एक संगमरमर में तराशा
तथा
दूसरा पश्मीना से निर्मित



पश्मीना
शाल

ये दोनों—ताज एवं पश्मीना। सदियों से ये दोनों
समय के थपेड़ों से अछूते रहे हैं।

असल में पश्मीना ताज से भी काफी पुरानी कृति है।
समयानुसार शाल की बनावट और प्रयोग में भी
परिवर्तन हुआ है। अपने आप में सदियों का
इतिहास एवं कारीगरों की कुशलता को समेटे
शाले सुल्तानों, मुगलों, शाहंशाहों,
काउंटस एवं लार्डस के साथ-साथ
आज के शौकीनों की भी
पहली पसन्द है।

आहुजासंस
शाल वाले (प्रा०) लि०

करोल बाग • साऊथ एक्स.-II

6/44, अजमल खाँ रोड, करोल बाग, नई दिल्ली -110 005 फोन : 42499011-012
E-20, साऊथ एक्स.- II, मेन मार्केट, नई दिल्ली -110 049, फोन : 41345200-201-203
थोक : 42499015-16, निर्यात : 42499018-19 फैक्स : 42499099 ई-मेल : info@ahu Jasons.com